मानवगृह्यसूत्रम्

कृष्णयजुर्वेदस्य मैत्रायणीशाखाया
गृह्यकर्मप्रतिपादकम्
भाषावृत्तियुतम्

ब्राह्मणसर्वस्वमासिकपत्रसम्पादकेन
भीमसेनशर्मणा लोकोपकाराय
निर्मितया नागरीभाषया
समलङ्कृतम्

सत्यव्रतशर्मद्विवेदस्य प्रबन्धेन तदीये वेदप्रकाश
नाम्नि यन्त्रे मुद्रापयित्वा प्राकाश्यं नीतम् ॥

संवत् १९६१ सन् १९०५

अथ मानवगृह्यसूत्रभूमिका।

यह मानवगृह्यसूत्र कृष्णयजुर्वेद की ८६ शाखाओं में से मैत्रायणी शाखा का सूत्र है। इस के भाषानुवाद में जिन २ मन्त्रों की प्रतीकें दी हैं वे मन्त्र मैत्रायणी शाखा में मिलेंगे। और जो पूरे २ लिखे हैं वे सब अन्य वेद शाखाओं के मन्त्र हैं। क्योंकि सभी गृह्य श्रौत कल्पसूत्रकारों की यह शैली ही है कि वे अपनी शाखा के मन्त्रों की प्रतीकें रखते तथा अन्य शाखाओं के जिन मन्त्रों को लेना चाहते हैं उन को सूत्रों के साथ पूरे २ ज्यों के त्यों लिख देते हैं। वेद के छः अङ्गों में एक कल्प भी प्रधान वेदाङ्ग है। छः अङ्गों में वेद के तीन अङ्ग प्रधान हैं। व्याकरण निरुक्त और कल्प ये ही तीनों कठिन भी हैं। इन तीन में भी व्याकरण मुख्य है इसी लिये (मुखं व्याकरणं स्मृतम्) कहा है। इन्हीं तीन अङ्गों के पढ़ने जानने से वेदार्थ करने समझने की योग्यता हो सकती है। इस कल्प नामक अङ्ग को ऋषियों ने वेद के (हस्तौ कल्पोऽथ पठ्यते) हाथ कहा है। यह वेद का कल्प अङ्ग गृह्य और श्रौत दो भागों में विभक्त है। जैसे हाथों के विना मनुष्य अपने सुखार्थ कुछ काम नहीं कर सकता वैसे ही कल्प के विना खाली वेद को देखने जानने वाला अपने हितार्थ वेदोक्त कर्म कुछ नहीं कर सकता। और कर्म द्वारा ही मनुष्य का इष्ट सिद्ध हो सकता है इस लिये वेद के कल्पाङ्ग का पढ़ना देखना जानना हम को अपना इष्ट साधनार्थ अत्यावश्यक है। गृह्य श्रौत दोनों प्रकार के प्रत्येक शाखा के साथ भिन्न २ हज़ारों कल्प सूत्र पूर्व काल में थे जो कालवश अधिकांश लुप्त हो गये। इस वेद के कल्पाङ्ग के साथ ही जैमिनि आचार्य के बनाये पूर्वमीमांसा शास्त्र का बड़ा सम्बन्ध है। कल्पाङ्ग की रीति भांति को जो नहीं जानता वह पूर्व मीमांसा शास्त्र को भी नहीं समझ सकता। इन गृह्य श्रौत दोनों प्रकार के कल्प सूत्रों में गृह्य की अपेक्षा श्रौत कठिन है क्यों कि श्रौत को भाष्य टीका होने पर भी समझना कठिन है। सम्प्रति कोई रोक टोक न होने से जो लोग कल्प वेदाङ्ग शास्त्र का कुछ भी मर्म नहीं जानते वे भी लोभ वश हो २ कर इन में किसी २ गृह्य सूत्रादि का भाषानुवाद कर २ यत्र तत्र प्रकाशित करने को तत्पर हो गये हैं इस से और भी अधिक २ अज्ञान तथा अनर्थ फैलने की सम्भावना है। ईश्वर ही रक्षा करेगा। इसी मैत्रायणी शाखा का मानव कल्प श्रौतसूत्र भी मिलता है जो कलकत्ता में पहिले ही छप चुका है। जिस का पता कहीं २

हमने इस गृह्यसूत्र के भाषाटीका में भी दिया है। ये दोनों मानव कल्प गृह्य श्रौतसूत्र एक ही आचार्य के बनाये हैं परन्तु यह मानव गृह्यसूत्र जहां तक हमे ज्ञात है अब तक भारतवर्ष में नहीं छपा था। यदि कहीं छपा भी हो तो भाषाटीका न होने से इस को सर्वसाधारण मनुष्य लेकर देख नहीं सकते थे। यह ग्रन्थ रूस का छपा (जगन्मोहन वर्मा-ग्राम ड्डेंपार। डाक छपिया जि० बस्ती से) हमें मिला है। इस लिये हमने इस को भाषाटीका करके छपादिया है।

हमारे पाठक लोग मानव धर्म शास्त्र [जो मनुस्मृति के नाम से प्रसिद्ध है जिस का द्वितीय नाम भृगुप्रोक्त संहिता भी है] को जानते ही हैं। वेदादि शास्त्रों की मर्यादा जानने वाले ब्राह्मणादि को यह भी विदित है कि पूर्व मीमांसाकार जैमिनि आचार्य ने जिस वेदोक्त सनातन धर्म का लक्षण (चोदनालक्षणोऽर्थो धर्मः) सूत्र से किया है उस धर्म का ठीक २ पता संस्कृत के विद्वानों को इन्हीं कल्प सूत्रों के पढ़ने देखने विचारने से लगता है। अर्थात् श्रुतियों में कहे धर्म को ठीक २ करने की रीति भांति समझाने के लिये प्रथम श्रौत तथा गृह्य नाम कल्पसूत्र हमारे पूर्वज ऋषियों ने बनाते थे। श्रुति में कहे धर्म को खोलने वाले होने से ही उन का नाम श्रौत सूत्र रक्खा गया है। उस श्रुति में कहे धर्म में जो शंका उत्पन्न होती थीं वा होती हैं और होंगी उन का समाधान करने के लिये जैमिनि आचार्य ने पूर्वमीमांसा शास्त्र बनाया है। जैसे घट पटादि पदार्थों के बनने की शक्ति पहिले से ही पृथिवी के भीतर अनादि विद्यमान है वा यों कहो कि घट पटादि सभी पदार्थ अपने २ सूक्ष्म रूप से अपने २ उपादान कारण पृथिव्यादि में पहिले से ही विद्यमान हैं तभी तो पृथिव्यादि से वैसी २ दशा में प्रकट हो २ कर अपने २ कारण में लीन हो जाते हैं। इसी अभिप्राय को लेकर सांख्यशास्त्र का यह सिद्धान्त चला है कि (नासत आत्मलाभः। न सत आत्महानम्) असत् वस्तु के स्वरूप का लाभ और सत् वस्तु के स्वरूप की हानि कदापि नहीं होती। वैसे ही सब श्रौत सूत्रादि ग्रन्थोंका मूल वेद है पृथिवी से घट पटादि के तुल्य सब ग्रन्थ कोई साक्षात् कोई परम्परागत वेद से निकले हैं। इस से श्रौत गृह्य मीमांसा न्याय सांख्यादि सब का मूल वेद है। तथा श्रौत गृह्यात्मक कल्पसूत्रों का भी समझना जब कालक्रम से मनुष्यों के अल्पज्ञ होते जाने

से ऋषियों को कठिन प्रतीत हुआ तब अठारह स्मृतियां मानवधर्म शास्त्रादि बनाये कि जिन से उसी प्रेरणारूप वेदोक्त धर्म के मर्म को ठीक २ समझाया जावे। चाहे यों कहो मानो कि सनातन वैदिक धर्म का अधिक २ मर्म खोजने के लिये ही स्मृतियां और उन पर इतिहासपुराणादि पुस्तक बनते गये हैं। मनुस्मृति आदि में (वैवाहिकेऽग्नौ कुर्वीत गृह्यंकर्म यथाविधि) इत्यादि श्लोकों में कहे गृह्यकर्म ये ही हैं कि जो मानवगृह्यसूत्रादि में कहे गये हैं। और यथाविधि कहने से जैसा विधान उन कर्मों का गृह्यसूत्रों में कहा गया है उसी विधि से करे। इस कथन से मनु आदि महर्षियों ने गृह्य श्रौत सूत्रों का स्पष्ट संकेत किया है। इस से सिद्ध होता है कि इन गृह्यनामक कल्पसूत्रों का आशय ले २ कर मनु आदि धर्मशास्त्र बने हैं। अर्थात् किसी स्मृति के बनने में किसी वेदशाखा के किसी गृह्यसूत्र का आशय लिया गया है। तदनुसार अनेक बातों के साफ २ मिलने से जान पड़ता है कि मनुस्मृति के बनने में विशेष कर इस मानवगृह्यसूत्र का आशय लिया है। इसके लिये कई उदाहरण हम नीचे दिखाते हैं॥

मनुस्मृति में धर्म के व्याख्यान का आरम्भ द्वितीयाध्याय से चला है वहां प्रथम ब्रह्मचर्य धर्म कहा है यहां इस गृह्यसूत्र के आरम्भ में भी प्रथम ब्रह्मचारी के नियम चले हैं। ब्रह्मचारी सब बाल मुड़ावे वा केवल शिखा रक्खे वा सब बाल रखावे (मनु० अ० २ श्लोक २१९। मुण्डोवास्याज्जटिलोवास्यादथवा स्याच्छिखाजटः। मानवगृह्ये पु० १ खं० २ सू० ६ मुण्डः शिखाजटः सर्वजटो वा) प्रातः सायंकाल सूर्य के उदय अस्त पर सोता रहे तो प्रायश्चित्त (मनु० अ० २। श्लो० २२०। मानवगृह्ये पु० १। खं० ३। सू० १) श्रावण की पौर्णमासी पर उपाकर्म करे (मनु० अ० ४। ९५। मानवगृह्य पु० १ खं० ४ सू० १ से) गुरु की अनुमति आज्ञा लेकर समावर्त्तन करे (मनु० अ० ३। श्लो० ४। मानवगृह्य पु० १ खं० २ सू० १८) रजस्वला के साथ सोने आदि का निषेध (मनु० अ० ४ श्लो० ४०। मानवगृह्य पु० १। खं० २ सू० १९) ग्राम से बाहर निकल कर एकान्त जङ्गल में सन्ध्या करना (मनु० अ० २। श्लो० १०४। मानवगृह्य पु० १ खं० २ सू० २) ब्रह्मचारी को मधुमांस का तथा स्त्री के स्पर्शादि का निषेध (मनु० अ० २। श्लो० १७७। मानवगृह्य पु० १। खं० १ सू० ११। १२) इत्यादि सैकड़ों अंश जैसे २ इस मानवगृह्यसूत्र में लिखे हैं वैसे

ही ज्यों के त्यों मनुस्मृति में भी मिलते हैं । इस से यह सिद्ध है कि इसी मानवगृह्यसूत्र का विशेष सहारा ले कर मनुस्मृति नामक धर्मशास्त्र बना है। इस पर कोई यह शंका कर सकता है कि मनुस्मृति का सहारा लेकर मानवगृह्यसूत्र पीछे बना होऐसा भी तो दोनों के अंश मिलने से अभिप्राय निकल सकता है तब यही क्यों मान लिया जाय मनु आदि स्मृति पीछे से बनी हैं । तब इस का समाधान यह है कि मानवगृह्यसूत्रकार मन्त्र और ब्राह्मणात्मक वेद को छोड़ कर अन्य किसी ग्रन्थ की अपेक्षा नहीं रखते । इससे यह निश्चय है कि जो वस्तु जिस के पश्चात् वा जिस के विद्यमान होते हुए बनता है वह अपने से पहिले की स्वांश में अवश्य ही अपेक्षा रखता है । परन्तु मनुस्मृति आदि में अनेक स्थलों पर (यथाविधि) पद आता है उससे स्पष्ट सिद्ध है कि वह गृह्यसूत्र में लिखे विधान को बीच २ बतलाता है । इस कारण पूर्वोक्त विचार सर्वथा ठीक ही जानना चाहिये सन्देह ठीक २ न समझने से होते हैं ॥

हमने इस मानवगृह्यसूत्र को जैसा पुस्तक मिला वैसा ही शोध कर छपाया है । अशुद्धि विशेष न दीख पड़ने से शुद्धि पत्र इस के साथ नहीं लगाया गया है । यदि कम उठने के कारण कहीं २ छपने का दोष रहजाने से किन्हीं महाशयों को कोई २ अशुद्धि जान पड़े तो स्वयं शोध लेवें । और इस ग्रन्थ का सूची पत्र साथ में लगा होने से इस ग्रन्थ में कहे सब विषयों का ठीक२ पता लगजायगा । इस ग्रन्थ के अन्त में जिन के यहां पुत्र नहीं होते वा हो कर नहीं रहते उन के पुत्र उत्पन्न होने के लिये बहुत अच्छा पुत्रेष्टि याग कहा है । परन्तु उस को कोई धर्मात्मा श्रद्धालु शुद्धाचारी विद्वान् करावे यदि स्त्री को वन्ध्यादोष न हो तो पुत्रोत्पत्ति होने की पूर्ण सम्भावना है । इस ग्रन्थ में मनुष्य की अल्पज्ञता के कारण भाषानुवाद में कहीं कोई बड़ा दोष किन्हीं महाशय को प्रतीत हो तो वे कृपादृष्टि से हमें अवश्य सूचितकरें

ह० भीमसेनशर्मणः

सम्पादक ब्रा० स० स्थ—इटावा—

अथ मानवगृह्यसूत्राणां विषय सूचीपत्रम् ॥

अथ मानवगृह्यसूत्रम्

उपनयनप्रभृति व्रतचारी स्यात् ॥ १ ॥ मार्गवासाः संहतकेशो भैक्षाचार्यवृत्तिः सशल्कदण्डः सप्तमुञ्जां मेखलां धारयेदाचार्यस्याप्रतिकूलः सर्वकारी ॥ २ ॥ यदेनमुपेयात्तदस्मै दद्याद् वहूनां येन संयुक्तः ॥३॥ नास्यशय्यामाविशेत् ४ न संवस्त्रयेत् ॥ ५ ॥ न रथमारोहेत् ॥ ६ ॥ नानृतं वदेत् ॥७॥ न मुषितां स्त्रियं प्रेक्षेत ॥८॥ न विहारार्थी जल्पेत् ॥९॥

भावार्थ.—यज्ञोपवीतसंस्कार होने से लेकर आगे कहे नियमों का पालन करने वाला ब्रह्मचारी हो ॥१॥ मृगचर्म का वस्त्र दुपट्टे के स्थान में ओढ़ने वाला हो सब वाल रक्खे वा सब कटावे अथवा केवल चोटी रक्खे भिक्षा मांगकर वा आचार्य से भोजनरूप जीविका करे वक्कलसहित ढांक वा वेल का दण्ड धारण करे सात मूजों (कोथों) की मेखला कटिभाग में धारण करे। आचार्य—गुरु के समक्ष झूठ वा छल कपटादि कुछ न करे आज्ञाकारी रहे और गुरुसेवार्थ गुरु को स्नानादि कराना आदि सब काम करे ॥२॥ जो कुछ धनादि वस्तु ब्रह्मचारी को मिले वह सब गुरु को समर्पण करे यदि कई गुरु हों तो जिस के समीप विशेष रहना हो उस को धनादि देवे ॥ ३ ॥ गुरु की शय्या वा आसन पर पीछे भी न बैठे न लेटे ॥ ४ ॥ सूत आदि के अच्छे २ वस्त्र गुरु के तुल्य न धारण करे वा स्त्री आदि के वस्त्रों से अपने वस्त्रों वा शरीर का स्पर्श न होने देवे ॥ ५ ॥ रथ घोड़ा हाथी आदि पर न चढ़े ॥ ६ ॥ मिथ्या भाषण कठोर भाषण और किसी की निन्दा वा चुगली न करे व्यर्थ न बोले ॥ ७ ॥ किसी नङ्गी स्त्री को न देखे न स्पर्श करे स्त्री का स्मरण भी न करे ॥ ८ ॥ काम भोग सम्बन्धी स्त्रियों का कथन वा धन सुवर्णादि का कथन न करे न सुने अर्थात् कामैषणा तथा वित्तैषणा से सर्वथा अपने को बचाता रहे ॥ ९ ॥

नरुच्यर्थंकिंचनधारयीत ॥ १० ॥ सर्वाणिसांस्पर्शिकानि स्त्रीभ्योवर्जयेत् ॥ ११ ॥ नमधुमांसेप्राश्नीयात्क्षारलवणे च ॥ १२ ॥ न स्नायादुदकंवाऽभ्यवेयात् ॥ १३ ॥ यदिस्नायाद्दण्डइवाप्सुप्लवेत ॥ १४ ॥ प्रागस्तमयान्निष्क्रम्यसमिधाःआहरेत् । हरिण्यौब्रह्मवर्चसकामइतिश्रुतिः ॥ १५ ॥ इमंस्तोममर्हतइत्यग्निंपरिसमुह्यपर्युक्ष्यपरिस्तीर्य—एधोऽस्येधिषीमहीतिसमिधमादधाति,समिदसिसमेधिषीमहीतिद्वितीयाम् १६ अपो अद्यान्वचारिषमित्युपतिष्ठते ॥ १७ ॥ यदग्ने तपसा तपो ब्रह्मचर्यमुपेमसि । प्रियाः श्रुतस्य भूयास्मायुष्मन्तः सुमेधसः ॥ इति मुखं विमृष्टे ॥ १८ ॥

भावार्थः--चित्त को प्रसन्न करने के लिये वा अपनी शोभा बढ़ाने के लिये इतर चन्दन पुष्पमालादि कुछ धारण न करे ॥ १० ॥ स्त्री का वर्णन काव्य सुनना स्त्री के स्तनादि अङ्गों का देखना छूना खुजलाना उबटन करना आदि तथा गाना बजाना नाचनादि सब काम सर्वथा छोड़ देवे ॥ ११ ॥ शहद मांस खार और लवण न खावे परन्तु यवाखार और सैंधे लवण का निषेध नहीं है ॥ १२ ॥ नित्य कामना से स्नान न करे जलाशय में घुसकर स्नान न करे । किन्तु जलाशय के समीप आचमनादि के लिये जाया करे ॥ १३ ॥ यदि स्नान भी करे तो शरीर को मल २ कर न धोवे तथा उबटन न करे किन्तु लकड़ी के तुल्य जल पर उतराता रहै ॥ १४ ॥ सूर्यास्त होने से पहिले अपने आश्रम से बाहर निकल के दूर से स्वयं सूखी हुई समिधा लावे लो श्रुति में लिखा है कि ब्रह्मतेज बढ़ता है ॥ १५ ॥ (इमंस्तोममर्हत०) इस मन्त्र से अग्नि के समीप हाथ से वा कंचीसे संमार्जन कर अग्नि के सब ओर प्रदक्षिण जल सेचन करके सब ओर कुश बिछा के (एधोऽस्येधि०) मन्त्र से एक समिधा अग्नि में चढ़ावे और (समिदसि०) मन्त्र से दूसरी समिधा चढ़ावे ॥ १६ ॥ (अपोअद्यान्व०) मन्त्र से अग्नि का उपस्थान करे ॥ १७ ॥ (यदग्नेतपसा०) मन्त्र पढ़ के दहिने हाथ में जल लेके मुख का स्पर्श करे ॥ १८ ॥

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाइति श्रोत्रे अभिमृशति ॥ १९ ॥ भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राइति चक्षुषी ॥२०॥ स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूभिर्व्यशेमदेवहितमित्यङ्गानि ॥२१॥ इह धृतिरिहस्वधृतिरिति हृदयदेशमारभ्य जपति ॥ २२ ॥ रुचं नो धेहीति पृथिवीमारभते ॥ २३ ॥ त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषमगस्त्यस्य त्र्यायुषम्। यद्देवानां त्र्यायुषं तन्मे अस्तु त्र्यायुषम्। इति भस्मनाङ्गानि संस्पृश्यापोहिष्ठीयाभिर्मार्जयते ॥ २४ ॥ इति प्रथमः खण्डः समाप्तः ॥

अथ सन्ध्यामुपास्ते ॥ १॥ प्रागस्तमयान्निष्क्रम्योत्तरतो ग्रामस्य पुरस्ताद्वा शुचौ देशे निषद्योपस्पृश्यापामञ्जलिं पूरयित्वा प्रदक्षिणमावृत्य-आयाहि विरजे देव्यक्षरे

(भद्रंकर्णेभिः०) मन्त्र से दोनों कानों का स्पर्श करे प्रथम दहिने फिर बायें का ॥ १९ ॥ (भद्रंपश्येमा०) मन्त्र से दोनों आखों का एक साथ ॥ २० ॥ (स्थिरैरङ्गै०) मन्त्र से शिर आदि सब अङ्गों का स्पर्श करे ॥ २१ ॥ (इहधृति०) मन्त्र का हृदय को स्पर्श करता हुआ जप करे ॥२२ ॥ (रुचंनोधेहि०) मन्त्र को पृथिवी का स्पर्श करता हुआ जपे ॥ २३ ॥ (त्र्यायुषंजमदग्नेः०) मन्त्र को पढ़ता हुआ शिर आदि सब अङ्गों में चढ़ाई हुई समिधों की भस्म लगावे फिर (आपोहिष्ठा०) आदि तीन मन्त्रों से तीन बार मार्जन करे ॥ २४ ॥ प्रातःकाल सन्ध्योपासन के पश्चात् समिदाधान करे। सन्ध्या करने को सायंकाल निकले तभी समिधा लाया करे सन्ध्या आश्रम से बाहर और समिदाधान आश्रम में किया करे ॥

भावार्थः—अब सन्ध्योपासन कर्म का विचार लिखते हैं। सायंकाल बैठकर सन्ध्या करे ॥ १ ॥ सूर्यास्त होने से पहिले गुरु के आश्रम वा ग्राम से निकलकर उत्तर वा पूर्व दिशा में जाकर शुद्ध स्थान में बैठ कर हाथ पांव धो

ब्रह्मसंमिते। गायत्रि ! छन्दसां मातरिदं ब्रह्म जुषस्व मे ॥ इत्यावाहयति ॥२॥ ओजोऽसीति जपित्वा,कस्ते युनक्तीति योजयित्वा, ओंभूर्भुवः स्वस्तत्सवितुरित्यष्टौकृत्वः प्रयुङ्क्त इत्याम्नाताः कामाः। आदेवोयातीति त्रिष्टुभं राजन्यस्य। युञ्जतइति जगतीं वैश्यस्य ॥ ३ ॥ उदुत्यं जातवेदसमिति द्वे निगद्य कस्ते विमुञ्चतीति विमुच्योदकाञ्जलिमुत्सृजति ॥४॥ एवं प्रातस्तिष्ठन्॥५॥ एतेनधर्मेण द्वादशचतुर्विंशतिषट्त्रिंशतमष्टाचत्वारिंशतंवावर्षाणि यो ब्राह्मणो राजन्यो वैश्यो वा ब्रह्मचर्यं चरति मुण्डः शिखाजटः सर्वजटो वा मलजुर-

के अञ्जुली में जलभर कर प्रदक्षिणावृत्ति करके (आया हि विरजे०) मन्त्र पढ़ के गायत्री का आवाहन करे ॥ २ ॥ फिर (ओजोऽसि०) मन्त्र पढ़ के गायत्री देवी की स्तुति करके (कस्तेयुनक्ति०) मन्त्र पढ़ के अपने साथ गायत्री देवी को युक्त कर (ओं भूर्भुवः०) मन्त्र को प्रणव सहित ब्राह्मण ब्रह्मचारी आठवार नित्य २ पढ़ा करे तो ब्रह्मचारी की सब कामना पूर्ण हो जाती हैं (आदेवोयाति०) इस त्रिष्टुप् छन्द वाले मन्त्र का उपदेश उपनयन समय क्षत्रिय ब्रह्मचारी को होना चाहिये तथा (युञ्जते०) इस जगती मन्त्र का उपदेश वैश्य ब्रह्मचारी को करना चाहिये और वे दोनों इन्हीं अपने २ मन्त्रों का आठ २ वार नित्य २ प्रणवव्याहृति सहित जप किया करें। यह व्यवस्था अत्यनुकूल ही जानो॥३॥(उदुत्यंजातवेद०)इत्यादि दो मन्त्रोंको उच्चस्वरसे पढ़के (कस्ते विमुञ्चति०) मन्त्र द्वारा गायत्री का विमोचन करके पहिले भरी जलाञ्जलि को भूमि पर छोड़ देवे। अर्थात अंजुली में जल भर के आठवार प्रणवादि सहित गायत्री का जप धीरे २ करने बाद यह कृत्य ब्राह्मण करे और अपने २ मन्त्रों से ऐसा ही क्षत्रियादि करें ॥ ४ ॥ इसी उक्त प्रकार से प्रातःकाल खड़े होके सन्ध्या करे ॥५॥ इस उक्त प्रकार होकर नित्य२ नियम धर्मका पालन करता हुआ १२ । २४ । ३६ । वा ४८ वर्ष तक मुण्ड जटिल वा शिखा मात्र रखने वाला ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य ब्रह्मचर्य व्रत धारण करता है और मलिन-शरीर

बलः कृशः स्नात्वा स सर्वं विन्दते यत्किंचि मनसेच्छतीति॥६॥ एतेन धर्मेण साध्वधीते ॥ ७ ॥ छन्दस्यर्थान् बुद्ध्वा स्नास्यन् गां कारयेत् ॥८॥ आचार्यमर्हयेच्छ्रोत्रियः ॥९॥ अन्यो वेदपाठी न तस्य स्नानम् ॥१०॥ आपोहिष्ठेति तिसृभिर्हिरण्यवर्णाःशुचय इति द्वाभ्यां स्नात्वाऽहते वाससी परिधत्ते॥११॥ वस्त्र्यसि वसुमन्तं मा कुरु सौवर्चसाय मा तेजसे ब्रह्मवर्चसाय परिदधामीति परिदधाति ॥१२॥ यथा द्यौश्च पृथिवी च न विभीतो न रिष्यतः । एवं मे प्राण मा बिभ एवं मे प्राण मा रिषः ॥ इत्याङ्क्ते ॥१३॥ हिरण्यमाबध्नीते ॥१४॥ छत्रं धारयते दण्डं मालां गन्धम् ॥१५॥ प्रतिष्ठे स्थो दैवते द्यावापृथिवी मा मा संताप्समित्युपानहौ ॥१६॥ द्विवस्त्रोऽत

निर्बल पतला कृश हुआ समावर्त्तन स्नान करता है वह जो २ मन से चाहता है उस सब को प्राप्त कर लेता है ॥ ६ ॥ इस उक्त नियम से जो कुछ पढ़ता है वह पढ़ना ठीक सुफल होता है ॥ ७ ॥ व्याकरण मीमांसादि पढ़ने द्वारा वेदार्थ जान कर समावर्त्तन करता हुआ सधुपर्कादि से पूजा करे ॥ ८ ॥ श्रोत्रिय हुआ वेद वेदाङ्ग पढ़के ब्रह्मचारी आचार्य का पूजन करे ॥ ९ ॥ ब्रह्मचारी दो प्रकार के होते हैं एक नैष्ठिक द्वितीय वेद समाप्ति पर समावर्त्तन करने वाला इन में नैष्ठिक वेदपाठी समावर्त्तन स्नान न करे ॥ १० ॥ (आपोहिष्ठा०) इत्यादि तीन मन्त्रों से तथा (हिरण्यवर्णा०) इत्यादि दो मन्त्रों से सुगन्धिमिश्रित जलद्वारा स्नान करके जो किसी थान में से फाड़े न हों ऐसे चौरेदार नये दो वस्त्रों को एक धोती एक ऊपर धारण करे ॥ ११ ॥ अर्थात् (वस्त्र्यसि०) मन्त्र पढ़ के वस्त्र धारण करे ॥ १२ ॥ फिर (यथा द्यौश्च०) मन्त्र से प्रथम दहिनी फिर बायीं आंख में अञ्जन लगावे॥१३॥ फिर विना ही मन्त्र पढ़े कानों में सुवर्ण के कुण्डल और सुवर्ण के कड़ा आदि आभूषण धारण करे ॥ १४ ॥ फिर छाता बांस की छड़ी पुष्पमाला चन्दन केशरादि सुगन्ध इन सब को धारण करे ॥ १५ ॥ फिर (प्रतिष्ठे स्थो०) मन्त्र से प्रथम दहिने पग में फिर वाम पग में नयेजूते पहिने ॥१६॥ इस से आगे सदा

ऊर्ध्वं भवति तस्मात्क्षौमं वासो भर्तव्यमिति श्रुतिः ॥१७॥

आमन्त्र्य गुरून् गुरुवधूश्च स्वान् गृहान् व्रजेत ॥ १८ ॥ प्रतिपितृमपरया द्वारा निष्क्रमणं मलवद्वाससा सह संवदनं रजःसुवासिन्या सह शय्या गुरोर्दुरुक्तवचनमस्थाने शयनं स्मयनं सरणं स्थानं यानं गानं तस्य चेक्षणम् ॥ १९ ॥ पौर्णमास्याममावास्यायां वाऽऽग्नेयेन पशुना यजेत ॥ २० ॥ तस्य हविर्भक्षयित्वा यथासुखमतऊर्ध्वं मधुमांसे प्राश्नीयात् क्षारलवणे च ॥ २१ ॥ इति द्वितीयः खण्डः ॥

यमेवं विद्वांसमभ्युदियाद्वाऽभ्यस्तमियाद्वा प्रतिबुध्य जपेत्-

दो वस्त्र धारण करने वाला स्नातक हो क्योंकि श्रुति में लिखा है कि स्नातक गृहस्थ शुद्ध शोभित निर्मल वस्त्र धारण करे। अर्थात् समावर्त्तन में प्रथम से रक्खे हुए सब बाल शिखा छोड़के पहिले मुड़ावे पीछे पूर्वोक्त स्नानादि करे॥१७॥ यदि पिता से भिन्न गुरु के पास वेदाध्ययनार्थ गया हो तो गुरु और गुरुपत्नी से आज्ञा लेकर अपने पितृघर को जावे ॥ १८ ॥ अब स्नातक गृहस्थ के लिये कुछ नियम कहते हैं। घर के मुख्य द्वार को छोड़ के किसी खिड़की आदि से न निकला करे। मलिन कपड़े वालों का स्पर्श न करे। रजस्वला पत्नी के साथ न सोवे। माता पितादि गुरु लोगों के विषय में समक्ष वा परोक्ष में कटुवाक्य न कहे न सुने। शयन स्थान से अन्यत्र न सोवे बिना प्रयोजन न हंसे व्यर्थ न डोले निष्प्रयोजन कहीं न ठहरे गाना बजाना नाचना न करे और न अन्यों के गानादि को सुनने देखने को जावे ॥१९॥ समावर्त्तन संस्कार के पश्चात् जो पौर्णमासी वा अमावास्या पड़े उसी दिन अग्नि देवता वाला पशुयाग करे ॥ २० ॥ उस में यज्ञशेष हविष् भक्षण करके आगे शहद् मांस खार और लवण चाहे तो खावे। मांस भक्षण का यहां विधान नहीं किन्तु इससे पूर्व कदापि न खावे यह दिखाना है। मांसभक्षण राग प्राप्त होने से उसका विधान हो नहीं सकता प्राप्ति में निषेध और अप्राप्ति में विधि होता है ॥२१॥ यह दूसरा खण्ड समाप्त होगया ॥

भावार्थ—जिसने उक्त प्रकार ब्रह्मचर्यव्रतके साथ गुरु मुख से वेदाध्ययन करके

पुनर्मामैत्विन्द्रियं पुनरायुः पुनर्भगः। पुनर्द्रविणमैतुमाम्। पुनर्ब्राह्मणमैतुमाम्। अथो यथेमे धिष्ण्यासो अग्नयो यथास्थानं कल्पयन्तामिहैव। इत्यभ्युदितः॥१॥ पुनर्म आत्मा पुनरायुरैतु पुनः प्राणः पुनराकूतिरैतु। वैश्वानरो वावृधानो वरेणान्तस्तिष्ठतो मे मनो अमृतस्य केतुः॥ इत्यभ्यस्तमितः॥२॥ उभावेववाभ्युदितो जपेदुभावेव वाभ्यस्तमितः॥३॥ यद्यचरणीयान्वा चरेदनाक्रोश्यान्वा क्रोशेदभोज्यस्य वाऽन्नमश्नीयादक्षि वा स्पन्देत्कर्णो वा क्रोशेदग्निं वा चित्यमारोहेत्—श्मशानं वा गच्छेद्यूपं वोपस्पृशेद्वा रेतसो वा स्कन्देदेताभ्यामेव मन्त्राभ्यामाहुती जुहुयादपि वाज्यलिप्ते समिधावादध्यादपिवा मन्त्रावेव जपेत्॥४॥ एवमधर्मंमाचर्याऽस्थूलम्॥५॥ स्थूले वेषणया विहरेदवस्त्रो लोमस्व-

समावर्त्तन किया हो वह स्नातक गृहस्थ प्रातःकाल सोता रहे वा अन्य काम में लगा रहे और सूर्योदय होजावे वा सायंकाल में सूर्य अस्त होजावे और सन्ध्योपासन न कर पावे तो जागकर वा सचेत होकर प्रातःसन्ध्या के व्यतिक्रम में (पुनर्मामैत्वि०) इत्यादि दो मन्त्रों का जप करे॥१॥ तथा सायंकाल की सन्ध्या छूटने पर (पुनर्मआत्मा०) इत्यादि जपे॥२॥ अथवा दोनों प्रकार के उक्त मन्त्रों का दोनों के प्रायश्चित्त में जप करे॥३॥ यदि खिड़की से निकलनादि विरुद्ध आचरण करे यदि स्त्री पुत्रादि को धमकावे कोशे यदि सूदखोर ब्याज लेने वाले आदि का अन्न खावे यदि आंख फड़के वा कान में शब्द हो यदि यज्ञके अग्नि पर खड़ाहो यदि मुर्दाके साथ श्मशान भूमिमें जावे वा यज्ञके यूपस्तम्भ का स्पर्श करे वा स्वप्न में वीर्य स्खलित हो तो इन्हीं पूर्वोक्त दो मन्त्रों से प्रायश्चित्तार्थ दो आहुती होम करे अथवा घी में डुबोके दो समिधा अग्निमें चढ़ावे वा(पुनर्मामैतु०)इत्यादि दोमन्त्रों का जपही इन अपराधोंमें भी प्रायश्चित्त करे॥४॥ इसी प्रकार उपपातकादि छोटा वा थोड़ा अधर्म करके भी उक्त मन्त्रों से आहुति दे समिधा चढ़ावे वा जप करे॥५॥ और यदि चार म-

गाच्छादोऽग्निमारोहेत्संग्रामे वा घातयेदपिवाऽग्निमिन्धानं तपसाऽऽत्मानमुपयोजयीत ॥ ६ ॥ इति तृतीयः खण्डः ॥

वर्षासु श्रवणेन स्वाध्यायानुपाकुरुते ॥ १ ॥ स जुहोति। अप्वानामासि तस्यास्ते जोष्ट्रीं गमेयम्। अहमिद्धि पितुःपरि मेधामृतस्य जग्रभ। अहं सूर्यइवाजनि स्वाहा ॥ अप्वो नामासि तस्यते जोष्टं गमेयम् । अहमिद्धि पितुःपरि मेधामृतस्य जग्रभ। अहं सूर्यइवाजनि स्वाहा ॥ सरस्वती नामासि सरस्वान्नामासि युक्तिर्नामासि योगो नामासि मतिर्नामासि मनोनामासि तस्यास्ते जोष्ट्रीं गमेयम् । तस्य ते जोष्टं गमेयमिति सर्वत्रोऽनुषजति ॥ २ ॥ युजे स्वाहा

हापातकों में से कोई पाप किया हो तो उस पाप के चिह्न सहित भूमण्डल पर तीर्थादि में भ्रमण करे। जैसे ब्रह्महत्या की हो तो बिना शिर के रुण्ड पुरुष का चिह्न हो (गुरुतल्पे भगः कार्यः) गुरुपत्नी गमन में भग का चिह्न रहे। अथवा सूत वस्त्र से रहित रोमों सहित चर्म ओढ़ के सम्यक् प्रज्वलित अग्नि में गिरके जल जावे (प्रास्येदात्मानमग्नौवा समिद्धे त्रिरवाक् शिराः । इति मनुः ।) अथवा युद्ध में किसी के शस्त्र से मर जावे (मनु.—लक्ष्यं शस्त्रभृतां वा स्यात्०) अथवा अग्नि में समिदाधानादि नियम से करता हुआ प्राणायामादि तप करने में लग जावे ॥ ६ ॥ यह तीसरा खण्ड पूरा हुआ ॥

वर्षा ऋतु में श्रवण नक्षत्र के दिन स्वाध्यायोपाकरण नामक कर्म करे।१। वह वेदाध्ययन वा ब्रह्मयज्ञ का आरम्भ करने वाला (अप्वानामासि०) इत्यादि आठ आहुति होम आघार और आज्यभागाहुतियों के पश्चात् करे। तथा (सरस्वतीनामा०) इत्यादि छः खण्डों में जो २ स्त्रीलिङ्ग हैं उनके साथ (तस्यास्ते०) इत्यादि जोड़े। और (सरस्वान्नामा०) आदि पुंनपुंसक लिंगों में (तस्यतेजो०) इत्यादि जोड़ना तथा सब के अन्त में स्वाहा लगाना चाहिये ॥ २ ॥ तदनन्तर विद्यार्थियों वा अन्य सहाध्यायी वेदपाठियों

प्रयुजे स्वाहो युजे स्वाहेत्येतैरन्तेवासिनां योगमिच्छन्निति ॥३॥ प्राक्स्विष्टकृतोऽथजपति ॥ ऋतं वदिष्यामि सत्यं वदिष्यामि तन्मामवतु तद्वक्तारमवत्ववतु मामवतुवक्तारम्। वाङ्मे मनसि प्रतिष्ठिता मनो मे वाचि प्रतिष्ठितमाविरावुर्मयि धेहि वेदस्य वाणीः स्थ । ओंभूर्भुवः स्वस्तत्सवितुरिति ॥ ४ ॥ दर्भपाणिस्त्रिः सावित्रीमधीते। त्रींश्चादितोऽनुवाकान् ।को वो युनक्तीति च । उपाकुर्म हेऽध्यायानुपतिष्ठन्तु छन्दांसीति च ॥ ५ ॥ तस्यानध्यायाः समूहन्वातो वलीकक्षारप्रभृति वर्षं न विद्योतमाने न स्तनयतीति श्रुतिराकालिकं देवतुमुलं विद्युद्धन्वोल्काऽत्यक्षराः शब्दाः । आचारेणान्ये ॥ ६ ॥ अर्द्धपञ्चमासानधीत्योत्सृजति पञ्चार्द्धषष्ठा-

को चाहता हुआ स्नातक (युजेस्वाहा) इत्यादि तीन मन्त्रों से होम करे ।३। इस के अनन्तर स्विष्टकृत् आहुति से पहिले (ऋतंवदिष्यामि०) इत्यादि मन्त्र का जप करे फिर स्विष्टकृत् होम करे ॥ ४ ॥ फिर दहिने हाथ में कुश लेकर तीन वार गायत्री सावित्री मन्त्र पढ़े फिर (इषेत्वा०) इत्यादि तीन अनुवाक पढ़े । तदनन्तर (कोवोयु०) इत्यादि पढ़े ॥ ५ ॥ उपाकर्म के बाद तीन वा पांच दिन, आंधी आने पर वलीक नाम छज्जा से वर्षने पर अर्थात् इतनी वर्षा कम से कम हो जिस से छज्जा के छोर वा ओलाती टपकने लगे तब भी अनध्याय करे पर इस से कम वर्षने पर नहीं । तथा विजुली चमकने और बादल गर्जने पर भी जब तक चमके वा गर्जे तब तक वेद न पढ़े । ज्योतिः शास्त्र में लिखे अनुसार ग्रहों का जब युद्ध हो तब एक दिन रात वेद न पढ़े। विजुली इन्द्र धनुष् औ बड़े२ उल्का तारे टूटने पर तथा शृगालादि के कुसमय रोने पर भी और सामवेद की ध्वनि होने पर अन्यवेद न पढे । इनसे भिन्न अनध्याय मनु आदि धर्म शास्त्र में कहे अनुसार जानो ॥६॥ साढे चार वा सा-

न्द्या॥७॥अथ जपति ऋतमवादिषं सत्यमवादिषंतन्मावीत्तद्व-
क्तारमावीदावीन्मामावीद्वक्तारम्। वाङ्मे मनसि प्रतिष्ठिता-
मनो मे वाचि प्रतिष्ठितमाविरायुर्मयि धेहि। वेदस्य वाणोः
स्थ। ओंभूर्भुवः स्वस्तत्सवितुरिति॥८॥ दर्भपाणिस्त्रिः सावित्री-
मधीते। त्रींश्चादितोऽनुवाकान्। को वो विमुञ्चतीति विमुच्यो
त्सृजामहेऽध्यायान्प्रतिशत्रसन्तु छन्दांसीति च॥९॥ प्रतिपदं
पक्षिणीं रात्रीं नाधीयीत। नातऊर्ध्वमभ्रेषु ॥१०॥ आकालिको
विद्युत्स्तनयित्नुवर्षेषु ॥११॥ गोनामेषु मन्त्रब्राह्मणकल्पपि
तृमेधमहाव्रताष्टापदीवैषुवतानि दिवाऽधीयीत वैषुवत
मार्द्रपाणिः॥ १२ ॥ रुद्रान्न नक्तं न भुक्त्वा न ग्रामे ॥१३॥
शुक्रियस्य प्रवर्ग्यकल्पे नियमो व्याख्यातः। त्रयोविंशन्तु सं

के पांच महिने तक नियम से वेदाध्ययन करके वेदाध्यायोत्सर्ग कर्म करे॥७॥
फिर उस में (ऋतमवादिषं०) इत्यादि का जप करे॥८॥ फिर दहिने
हाथ में कुश लेकर तीन वार गायत्री सावित्री को जपे और (वृषे त्वा०)
इत्यादि तीन अनुवाक पढ़े फिर (कोवोविमुञ्चति०) इत्यादि पढ़े॥९॥
प्रतिपदा को एक दिन दो रात वेद न पढे। इस के पश्चात् भी बादल होने पर
भी न पढ़े॥१०॥ बिजुली चमकने बादल गर्जने और वर्षा होने पर आगे भी
एक दिन रात वेद का अनध्याय करे॥११॥ गौओं के नाम वाले मन्त्र
ब्राह्मण और कल्पसूत्रों को दिन में पढ़े। पितृमेध कर्म सम्बन्धी मन्त्र
ब्राह्मण और कल्प सूत्र तथा महाव्रत सम्बन्धी कल्प सूत्र अष्टापदी ब्राह्मण
और विषुवान् नामक यज्ञ के प्रतिपादक वैषुवत मन्त्र ब्राह्मणों को दिन में
पढ़े पर जल में हाथ भिगोकर वैषुवत को पढ़े॥१२॥ रुद्र देवता के प्रति-
पादक मन्त्र ब्राह्मण और कल्पों को रात में भोजन के पश्चात् और ग्राम में न
पढ़े॥१३॥ शुक्रिय नामक पच्चीश अनुवाकों को भी रात में भोजन के प-
श्चात् और ग्राम के भीतर न पढ़े। और इन शुक्रिय मन्त्र ब्राह्मण कल्पों के

मील्य ॥ १४ ॥ गवां तु न सकाशे गोनामानि गर्भिणीना-
मसकाशेऽष्टापदीं । रेतोमूत्रमिति च ॥ १५ ॥ शुनासीर्यस्य
च सौर्ये चक्षुष्कामस्य । चक्षुर्नोधेहिचक्षुषइति । सूर्योऽपोऽ
वगाहतइति च । आदित्यसौर्ययाम्यानि षडृचानि दिवा-
ऽधीयीत ॥ १६ ॥ उपाकृत्योत्सृज्य च त्र्यहं पञ्चरात्रमेके
॥ १७ ॥ वेदारम्भणे समाप्तौ चाकालम् ॥१८॥ ४ खण्डः समाप्तः
अथातोऽन्तरकल्पं व्याख्यास्यामः ॥ १ ॥ दर्भमयं वा-

अध्ययन के दिशा कालादि विशेष नियम मानव कल्प सूत्र के प्रवर्ग्य प्रकरण में कहे जानो । इन शुक्रिय के २५ अनुवाकों में तेईसवें अनुवाक को आंखें मीच कर पढ़ना चाहिये ॥ १४ ॥ गौओं के नामों वाले मन्त्र ब्राह्मण कल्पोंको गौओं के समीप न पढ़े । परन्तु अष्टापदी संज्ञक ब्राह्मण को गर्भिणी गौओंसे पृथक् पढ़े । तथा (रेतो मूत्रम्०) इत्यादि अपवित्र नामों वाले मन्त्र ब्राह्मण और कल्पों को उन २ अपवित्र पदार्थों के समीप न पढ़े ॥ १५ ॥ शुना सी-रीय पर्व की सूर्य देवता वाली (चक्षुर्नो० । सूर्योऽपो०) इन दो ऋचाओं को चक्षुओं का सुख चाहने वाला तथा शुनासीरीय पर्वकी आदित्य सूर्य और यम देवता वाली दो २ कर (छः) ऋचाओं को चक्षु सुख न चाहता हुआ भी दिन में पढ़े ॥ १६ ॥ वेदोपाकर्म और वेदोत्सर्ग कर्म करने पश्चात् तीन दिन अनध्याय रक्खे किन्हीं आचार्यों का मत है कि पांच दिन अनध्याय करे ॥१७॥ वेद का आरम्भ करने और वेदकी समाप्ति करने पश्चात् जिस समय आरम्भ समाप्ति किये हों उसी समय तक अनध्याय रक्खे उस के बीच में फिर द्वितीय वार आरम्भ समाप्ति न करे ॥१८॥ यह चौथा खण्ड समाप्त हुआ ॥

अब यहां से आगे इस पांचवें खण्ड में अन्तरकल्प नामक कर्म का व्याख्यान करेंगे । यह कर्म उपाकर्म के बाद होता है उस से पहिले नहीं होता। इस कर्म की प्रवृत्ति स्वाध्याय नामक ब्रह्मयज्ञ के अन्तर्गत है इस लिये इसका नाम अन्तरकल्प है ॥ १ ॥ दर्भ कूट कर बनाये वस्त्र को पहन कर आच-मन करके नदी आदि जलाशय के घाट पर (अपांनप्त्रे०) इस मैत्रायणी शा-

सः परिधायाचम्यापांनप्त्रइति तीरे जपित्वाऽपोऽवगाह्य ओंभुर्भुवःस्वस्तत्सवितुरिति ॥२॥ दर्भपाणिस्त्रिः सावित्री-मधीते त्रींश्चादितोऽनुवाकान् ॥ ३ ॥ आपो देवीः। हविष्म-तीरिमाःनिग्राभ्याःस्थ । महित्रीणामवोऽस्तु। अग्नेरायुरसि। देवीरापोऽअपांनपात् ।देवीरापोमधुमतीःअग्नयेस्वाहा।रा-त्रींरात्रीमित्यष्टौ ॥ ४ ॥ या ओषधयः । समन्यायन्ति । पु-नन्तु मा पितरः।अग्नेर्मन्वे। सशेवृधमधिधाः । कयानश्चित्र-आभुवदिति तिस्रः ॥५॥ तच्छंयोरावृणीमहइति मार्जयित्वा वासांस्युत्सृज्याचार्य्यान् पितृधर्मेण तर्पयन्ति ॥ ६ ॥ श्रा-द्धकल्पेन शेषो व्याख्यातः ॥ ७ ॥ इति ५ खण्डः ॥

अथातोऽग्निं प्रवर्त्तयन्ति ॥ १ ॥ उत्तरतो ग्रामस्य पु-

खा अ० २७ अनु० ८ का जप करके जल में डुबकी लगावे फिर (ओंभूर्भुवःस्व-स्तत्स०) इत्यादि गायत्री को दहिने हाथ में कुश लेकर तीन वार पढ़े ॥ २॥ और वेद के आदि से (इषेत्वा०) इत्यादि तीन अनुवाक पढ़े ॥ ३ ॥ फिर (आपो देवीः) इत्यादि प्रतीकों वाले आठ अनुवाक पढ़े ॥ ४ ॥ फिर (या-ओषधयः०) इत्यादि चार अनुवाकों को और (सशेवृधम्०) इत्यादि तीन ऋ-चाओं को पढ़े ॥ ५ ॥ फिर (तच्छंयोरा०) इत्यादि पांच ऋचाओं से मार्जन करके कुश के वस्त्र छोड़ कर कल्पसूत्रकार तथा अपने उपनयनादि कराने वा-लों में जो २ आचार्य मरगये हों उन सब का अपसव्यादि पितृधर्म से सब छा-त्र लोग तर्पण करें ॥६॥ आचार्यों के तर्पण के पश्चात् होने वाला शेषकाम इ-सी ग्रन्थ में कहे श्राद्ध कल्प अर्थात् पुरुष २ खं० ९ सू०१० से १४ तक कहे अ-नुसार जानो ॥ ७ ॥ यह पांचवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

अब इस छठे खण्ड में अन्तरकल्प का अङ्ग भूत स्नातकों तथा ब्रह्मचारि-यों के लिये अग्नि होम कहते हैं ॥ १ ॥ ग्राम से पूर्व वा उत्तर शुद्ध स्थान में श्रौत वेदी के आकार में कुछ जगह बनावे । उस वेदी के आहवनीय स्थान पूर्वान्त में चौकोण स्थण्डिल बनाके उस पर विष्टर रूप वा मुट्ठी २ भर दाभ

रस्त्वाद्वा शुचौ देशे वेद्याकृतिं कृत्वाऽऽहवनीयस्थाने सप्तछन्दांसि प्रतिष्ठाप्य विष्टरान् दर्भमुष्टीन्वा दक्षिणाग्निस्थाने भौगाकृतिं कौसितं खात्वा पश्चादुत्करमपां पूरयित्वा। गार्हपत्यस्थानेऽग्निं प्रणीय युञ्जानः प्रथमं मन इत्यष्टौ हुत्वाऽऽकूतमग्निं प्रयुजं स्वाहेतिषड्जुहोति। विश्वोदेवस्य नेतुरिति सप्तमीम्॥२॥ यज्ञियानां समिधां त्रींस्त्रीन् समित्पूलानुपकल्प्य प्राक्स्विष्टकृतस्तिष्ठन्तो व्याहृतिपूर्वकं खण्डिलस्यादितस्त्रिभिरनुवाकैरेकैकेन स्वाहाकारान्ताभिरादधाति ॥३॥ आपोहिष्ठीयाभिः कौसितान्मार्जयित्वा धानाभिर्ब्राह्मणान् स्वस्तिवाचयन्ति धानाभिर्ब्राह्मणान् स्वस्ति वाचयन्ति ॥४॥

इति षष्ठः खण्डः समाप्तः ।

के गायत्री आदि सात छन्दों को पूर्व २ की ओर स्थापित करे। और दक्षिणाग्नि की जगह में पूर्वाभिमुख गाड़ी के आकार वाला कौसित नाम छोटा गढ़ा खोदे पश्चात् उत्कर कुण्ड श्रौतों के अनुसार बनाके इन तीनों में, जल भर देवे। फिर उस वेदि से पश्चिम में गार्हपत्य के सदृश मण्डलाकार स्थण्डिल बना के उस पर अग्नि को स्थापित करके आघार आज्यभागाहुतियों के अनन्तर (युञ्जानःप्रथमंमनः०) इत्यादि आठ (आकूतमग्निं०) इत्यादि छः और (विश्वोदेवस्यनेतुः०) इस को मिला के सब १५ पन्द्रह आहुति घी की देवे ॥२॥ पलाश बेल आदि यज्ञियवृक्षों की समिधाओं के तीन तीन पूला (मूठा२ भर पृथक् २ प्रति पुरुष के) बांध कर स्विष्टकृत् आहुति से पहिले सब खड़े हुए वेद में कहे अग्निस्थापन प्रकरण के आदि के तीन अनुवाकों के साथ व्याहृति लगा के उन तीनों अनुवाकों से एक२ समित्पूला अग्नि में चढ़ावे ॥३॥ (आपोहिष्ठा०) इत्यादि तीन ऋचाओं से आहवनीयादि स्थानों में दर्भ मुष्टि रूप छन्द आदि जिन२ में जल भरा था उन सब का मार्जन करके तीन आदि ब्राह्मणों को एक २ करके भुंजे हुए जौ दे दे कर स्वस्तिवाचन करावे॥ यह छठा खण्ड पूरा हुआ ॥

अथोपनिषदर्हाः । ब्रह्मचारी सुचरित्री मेधावी कर्मकृद्धनदः प्रियो विद्यां विद्ययान्वेष्यन् ॥१॥ तानि तीर्थानि ब्रह्मणः ॥२॥ भार्यां विन्दते ॥३॥ कृत्तिकास्वातिपूर्वैरिति वरयेत् ॥४॥ रोहिणीमृगशिरःश्रवणश्रविष्ठोत्तराणीत्युपयमे तथोद्वाहे यद्वा पुण्योक्तम् ॥५॥ पञ्चविवाहकारकाणि भवन्ति वित्तं रूपं विद्या प्रज्ञा बान्धवइति ॥६॥ एकालाभे वित्तं विसृजेद् द्वितीयालाभे रूपं तृतीयालाभे विद्यां प्रज्ञायां बान्धवइति च विवहन्ते ॥ ७ ॥ बन्धुमतीं कन्यामस्पृष्टमैथुना

अब सातवें खण्ड में विवाह विषय का आरम्भ है। इस में प्रथम वेदान्तोपनिषद् पढ़ाने योग्य अधिकारी निम्न लिखित सात होते हैं। ब्रह्मचारी १। सदाचारी २। बुद्धिमान् ३ सन्ध्यातर्पणादि कर्म श्रद्धा से करने वाला ४ धनदेने वाला ५ आचार्य को प्रिय ६ और किसी विद्या के बदले विद्याचाहनेवाला७॥१॥ ये ब्रह्मचारी आदि वेद नामक शब्द ब्रह्म के तीर्थ हैं अर्थात् ऐसों को वेद पढ़ाने चाहिये ॥२॥ आगे लिखे प्रकार से भार्या स्त्री को प्राप्त हो ॥३॥ कृत्तिका स्वाति और पूर्वाफल्गुनी आदि तीनों पूर्वा नक्षत्रों में विवाह करे ॥४॥ रोहिणी मृगशिर श्रवण धनिष्ठा और तीनों उत्तरा ये नक्षत्र उपयमनाम वाग्दान और विवाह के लिये अच्छे हैं। अथवा पाराशरी आदि ज्योतिष के अच्छे ग्रन्थों में कहे नक्षत्रों में विवाह करे ॥५॥ कन्या का पिता वर की पांच दशा देखे १-धन। २-रूप। ३-विद्या।४-बुद्धि।५-कुटुम्ब। रूप कहने से काणे अन्धे आदि का निषेध और बान्धव के साथ कुलीनता भी आजाती है ॥६॥ यदि पांचो गुण वर में न मिलने होंतो धन को छोड़ दे क्यों कि धन अनित्य है विद्या बुद्धि वाले के पास धन हो जाना सुगम है। दो गुण न मिलते हों तो रूप को भी छोड़दे क्यों कि विद्या कुरूपों का भी रूप है। तीसरा न मिले तो विद्या को भी छोड़दे क्यों कि बुद्धिमान् होगा तो पीछे भी पढ़ सकता हैतथा नभीपढ़ सकेतोभी बुद्धिमान् निर्बुद्धिपण्डित से अच्छाहै तथा बुद्धि और कुटुम्ब इन दोनों में कुटुम्ब न होने पर भी बुद्धिमान् वर का विवाह करदेवे ॥ ७ ॥ जिस के साथ किसी पुरुष का संयोग न हुआ हो भाई जिस के को-

मुपयच्छेत समानवर्णामसमानप्रवरां यवीयसीं नग्निकां श्रेष्ठाम् ॥८॥ विज्ञानमस्याः कुर्यादष्टौ लोष्टानाहरेत् सीता-लोष्टं वेदिलोष्टं दूर्वालोष्टं गोमयलोष्टं फलवतो वृक्षस्या-धस्ताल्लोष्टं श्मशानलोष्टमध्वलोष्टमिरिणलोष्टमिति ॥९॥ देवागारे स्थापयित्वाऽथ कन्यां ग्राहयेत् ।यदि श्मशानलोष्टं गृह्णीयादध्वलोष्टमिरिणलोष्टं वा नोपयमेत् ॥१०॥ संजुष्टां धर्मेणोपयच्छेत ब्राह्मेण शौल्केनवा ॥११॥ शतमिति रथं दद्याद्गोमिथुनं वा ॥ १२ ॥

इति सप्तमः खण्डः समाप्तः ॥

हे विद्वान हो जो अपने वर्ण की हो जिस के प्रवर ऋषि अपने से भिन्न हों जो ठीक युवति अच्छी हो जिस की छाती के स्तन न उगे हों न ऋतुमती हुई हो जिस का रूप लावण्य वर्ण अच्छा गोरा हो ऐसी कन्या से विवाह करे । पुरुष की युवावस्था का आरम्भ सोलहवें वर्ष से और स्त्री की युवावस्था का आरम्भ ग्यारहवें वर्ष से हो जाता है ॥ ८॥ विधवा वा वन्ध्यादि गुप्त वा अदृष्ट दोषों की परीक्षा के लिये जुताखेत,होम की वेदि,दूब, गोबर, फल जिस में लगते हों ऐसे वृक्ष के नीचे का, मरघट, मार्ग और ऊषर भूमि इन सब में से एक २ मट्टी का ढेला लेकर किसी देवता के मन्दिर में आठों ढेला रक्खे और उन में से एक ढेला कन्या से उठवावे यदि मरघट, मार्ग और ऊषर के ढेलों में से उठालेवे तो उस के साथ विवाह न करे ॥ ९ । १० ॥ ब्राह्म वा आर्ष विवाह की रीति से उस के साथ विवाह करे । एक बैल एक गौ वा दो बैल दो गौ वा उन का मूल्य कन्या के पिता को देकर विवाह करना आर्ष कहाता है ॥ ११॥ शतमान सुवर्णभूषित रथ वा दोगौ दो बैल अथवा सुवर्णादि के आभूषण भोजन के वस्तु अन्नादि वा वस्त्र देकर विवाह करे ये सब पक्षान्तर में विकल्प हैं ॥ १२ ॥ यह सातवां खण्ड पूरा हुआ ॥

पश्चादग्नेश्चत्वार्यासनान्युपकल्पयीत ॥ १ ॥ तेपूपविशन्ति पुरस्तात्प्रत्यङ्मुखो दाता पश्चात्प्राङ्मुखः प्रतिग्रहीता दातुरुत्तरतः प्रत्यङ्मुखी कन्या दक्षिणत उदङ्मुखो मन्त्रकारः ॥ २ ॥ तेषां मध्ये प्राक्तूलान्दर्भानास्तीर्य कांस्यमक्षतोदकेन पूरयित्वाऽविधवास्मै प्रयच्छति ॥३॥ तत्र हिरण्यम् ॥४॥ अष्टौ मङ्गलान्यावेदयति ॥ ५ ॥ मङ्गलान्युक्त्वा ददामि प्रतिगृह्णामीति त्रिर्ब्रह्मदेया पिता भ्राता वा दद्यात् ॥ ६ ॥ सहिरण्यानञ्जुलीनावपति धनाय त्वेति दाता पुत्रेभ्यस्त्वेति प्रतिग्रहीता तस्मै प्रत्यावयति ॥ ७ ॥

अरणी से मन्थन करके निकालकर स्थापित किये अग्निसे पश्चिममें चार आसन बिछावे॥१॥उन आसनों पर निम्न रीतिसे बैठे। अग्नि से पूर्व में पश्चिमाभिमुख कन्यादाता बैठे अग्नि से पश्चिम में पूर्वाभिमुख वर वा पूज्य बैठे दाता से उत्तर में पश्चिम को मुख कर कन्या बैठे और अग्नि से दक्षिण में उत्तर को मुख कर मन्त्र पढ़ने वाला पुरोहित वा आचार्य बैठे ॥ २ ॥ उन सब के बीच पूर्व को जिन का अग्रभाग हो ऐसे कुश बिछाकर अक्षतों सहित जल से कांसे का पात्र भर के सौभाग्यवती जो विधवा न हो दाता के हाथ में देवे ॥ ३ ॥ उस पात्र में सुवर्ण डाले ॥ ४ ॥ अविधवा स्त्री आठ वस्तु मङ्गल रूप दाता को देवे ॥ ५ ॥ कन्या का पिता भाई वा माना जो संरक्षक हो वह जिसका वर से मूल्य नहीं लिया हो ऐसी ब्रह्मदेया कन्या को तीनवार अक्षत सुवर्ण डाले जल पात्र सहित (ददामि) कहकर देवे और वर तीन वार (प्रतिगृह्णामि) कहकर कन्या को स्वीकार करे ॥ ६ ॥ यदि कुछ धनादि वर से लेकर कन्या के पिता ने विवाह किया हो तो वर सुवर्णादि धन अंजली में ले और कन्या का पितादि कन्या का हाथ पकड़ के कहे कि (धनायत्वाददामि) तथा वर अपने हाथों में लिया सुवर्णादि कन्या के पिता को देता हुआ कन्या का हाथ पकड़े और कहे कि (पुत्रेभ्यस्त्वा प्रतिगृह्णामि) इस प्रकार धन और कन्या का दोनों लौट फेर कर लेवें ॥ ७ ॥

चतुर्व्यतिहृत्य ददाति ॥ ८ ॥ सावित्रेण कन्यां प्रतिगृह्य प्रजापतयइति च कइदं कस्माअदादिति सर्वत्रानुषजति कामैतत्तइत्यन्तम् ॥ ९ ॥ समाना वाआकूतानीति सह जपन्त्याऽन्तादनुवाकस्य ॥ १० ॥ खेरथस्यखेऽनसः खेयुगस्यशतक्रतो । अपालामिन्द्रस्त्रिःपूत्र्व्यकृणोत्सूर्यत्वचम् ॥ इति तेनोदकांस्येन कन्यामभिषिञ्चेत् ॥११॥ इति ८ खण्डः ॥

षडर्घ्या भवन्त्यृत्विगाचार्यो विवाह्यो राजा स्नातकः प्रियश्चेति ॥ १ ॥ अप्राकरणिकान्वा परिसंवत्सरादर्हयन्ति ॥ २ ॥ प्राकरणिकाः कर्त्तारः सदस्याश्च वृताः ॥ ३ ॥ न जीवत्पि-

चार वार देन लेन की लौट फेर दोनों करें ॥ ८ ॥ वर सविता देवता वाले (देवस्यत्वा०) इत्यादि प्रत्येक मन्त्र से कन्या को स्वीकार करे तथा प्रत्येक मन्त्र के अन्त में (कइदं०) से लेकर (कामैतत्ते) पर्यन्त मन्त्र को सब के साथ जोड़ लेवे ॥ ९ ॥ फिर अनुवाक के अन्त पर्यन्त शेष बचे (समानावाआकूतानि) इत्यादि मन्त्रों को कन्या के देने लेने वाले सब लोग एक साथ ही जपें अर्थात् स्पष्ट बोलें ॥ १० ॥ फिर वर (खेरथस्य०) इत्यादि ऋचा पढ़के कांसे के पात्र में पूर्व से रक्खे अक्षतों सहित जल से कन्या के शिरपर अभिषेक करे ॥ ११ ॥ यह आठवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

भा०-अब इस नवम खण्ड में मधुपर्क सम्बन्धी विचार कहते हैं । ऋत्विज्-पुरोहित १ । उपनयन कराके वेद पढ़ाने वाला आचार्य २ । जामाता वर ३ । राजा मूर्द्धाभिषिक्त ४ । स्नातक ब्रह्मचर्य समाप्त करने वाला ५ । श्वशुरादि प्रिय ६ ये छः पुरुष मधुपर्कादि के विधान से शास्त्रानुसार पूज्य होते हैं ॥ १ ॥ विवाह तथा अग्निष्टोमादि यज्ञों के समय तो मधुपर्क से पूजन का प्रकरण है वहां तो वर आदि का मधुपर्कविधि से पूजन होना ही इष्ट है । परन्तु विना प्रकरण के अकस्मात् ऋत्विजादि आवें तो एक वर्ष में एक ही वार मधुपर्क द्वारा पूजन करे अर्थात् एक वर्ष में द्विवारा पूजन न करे ॥२॥ यज्ञकर्म में वरण किये ऋत्विज् और सदस्य लोग भी प्राकरणिक होते हैं उन समय उन के वरण से पहिले मधुपर्क द्वारा पूजन होना उचित है ॥ ३ ॥ जिस

त्कोऽघ्यं प्रतिगृह्णीयादिति श्रुतिरथवा प्रतिगृह्णीयात् ॥४॥ अथैनमर्हयन्ति ॥ ५ ॥ कांस्ये चमसे वा दधि मधुचानीय वर्षीयसाऽपिधायाचमनीयप्रथमैः प्रतिपद्यन्ते ॥ ६ ॥ विराजोदोहोऽसि विराजोदोहमशीय मयिदोहः पद्यायै विराजः कल्पतामित्येकैकमाह्रियमाणं प्रतीक्षते ॥ ७ ॥ सावित्रेण विष्टरं प्रतिगृह्य—अहंवर्ष्मसदृशानामुद्यतामिवसूर्यः । इदंतमभितिष्ठामि योमाकश्चाभिदासति ॥ इति जपति ॥८॥ राष्ट्रभृदसीत्याचार्य आसन्दीमनुमन्त्रयते ॥९॥ मात्वादोष इत्यधस्तात्पादयोर्विष्टरमुपकर्षति ॥१०॥ विष्टर आसीनायैकैकं त्रिःप्राह ॥११॥ नैव भोइत्याह नम आर्षेयायेति श्रुतिः स्पृशत्यघ्यम् ॥१२॥ पाद्येन पादौ प्रक्षाल्य सावित्रेण मधु-

का पिता जीवित हो वह मधुपर्क द्वारा पूजा में विकल्पित है अर्थात् उसकी पूजा करे वा न करे ऐसा श्रुति में लिखा है ॥ ४ ॥ इन ऋत्विजादि का पूजन निम्न लिखित रीति से करे ॥ ५ ॥ कांसे के कटोरे में वा प्रणीता के तुल्य चमस पात्र में सहत और दही ला के एक बड़े पात्र से ढांप कर आचमनीय जल आदि सहित पूज्य से निकट पूजक आवे ॥६॥ आचमनादि के लिये लाये एक २ जलादि वस्तु को पूज्य ऋत्विगादि पुरुष (विराजो दोहोऽसि०) इत्यादि मन्त्र पढ़ता हुआ देखे ॥७॥ फिर (देवस्यत्वा०) इस सविता देवता वाले मन्त्र को पढ़ के विष्टर को हाथ में ले के (अहं वर्ष्म०) मन्त्र को जपे ॥८॥ आचार्यादि पूज्य बैठने को लाये कुर्सी चौकी वा सिंहासनादि को देखता हुआ (राष्ट्रभृदसि०) मन्त्र पढ़े ॥९॥ (मात्वादोष) इत्यादि मन्त्र पढ़ के पूज्य आचार्यादि दोनों पगों के नीचे विष्टर को दबावे ॥१०॥ (आचमनीयम्) (विष्टरः) इनदोनों को देता हुआ पूजक एक२ बार बोले परन्तु अघ्यं पाद्यादि देता हुआ (पाद्यं पाद्यं पाद्यम्) इत्यादि प्रकार तीन२ वार कहे ॥११॥ फिर पूज्य (नैव भोः) कहे कि मैं पूज्य हूं नहीं किन्तु (नम आर्षेयाय। मैं ऋषियों को नमस्कार करता हूं क्यों कि यहां भी वेही पूज्य हैं ऐसा श्रुति में कहा है फिर अघ्यं का स्पर्श करके ग्रहण करे ॥१२॥ पाद्य जल से

पर्कं प्रतिगृह्य प्रतिष्ठाप्यावसाय्य-नमो रुद्राय पात्रसदे न-मो रुद्राय पात्रसद इति प्रादेशेनाध्यधि प्रतिदिशं प्रदक्षिणं सर्वतोऽभ्युद्दिशति ॥१३॥ मधुवाताऋतायतइति तिसृभिरङ्-गुल्या प्रदक्षिणं प्रत्यृचं त्रिरायौति ॥१४॥ अमृतोपस्तरणम-सीत्युपस्तरति ॥१५॥ सत्यंयशःश्रीर्मयि श्रीः श्रयतामिति म-धुपर्कं त्रिःप्राश्नाति॥१६॥अमृतापिधानमसीत्याचामति॥१७॥ सुहृदेऽवशिष्टं प्रयच्छति॥१८॥ असिपाणिर्गां प्राह ॥१९॥हतोमे पाप्मा पाप्मानंमेहत ओंकुरुत इति प्रेष्यति ॥ २०॥ चतुरो ब्राह्मण-न्नानागोत्रान्भोजयेत् ॥ २१ ॥ पश्वङ्गंपायसं वा

प्रथम दहिना फिर वाम पग को धो कर (देवस्यत्वा०) इस सविता देवता वाले मन्त्र से दाता के तीन वार कहने पर मधुपर्क को दहिने हाथ में ले कर वाम हाथ में स्थापित करके दहिने हाथ की तर्जनी और अंगुष्ठ द्वारा थोड़ा२ ऊ-पर२ को ईशान से लेकर प्रत्येक दिशा में प्रदक्षिण क्रम से (नमोरुद्राय०) म-न्त्र को प्रत्येक दिशा के साथ वार२ पढ़ता हुआ मधुपर्क के छींटा देवे ॥१३॥ फिर (मधुवाताऋतायते०) इत्यादि तीन ऋचा पढ़ २ के दहिने हाथ की अ-नामिका अंगुली से मधुपर्क को मिलावे ॥१४॥ फिर (अमृतोप०) मन्त्र पढ़ के उपस्तार रूप आचमन प्रथम करे ॥१५॥ फिर (सत्यंयशः०) मन्त्र को पढ़ के ती-न वार थोड़ा२ लेकर मधुपर्क का प्राशन करे एकवार मन्त्र पढ़ के दोवार तू ष्णीम् ॥१६॥ तदनन्तर (अमृतापि०) मन्त्र पढ़ के ऊपर से अभिचार रूप आचम-न करे ॥१७॥ पश्चात् शेष बचे मधुपर्क को अपने किसी प्रिय मित्र को पात्र स-हित दे देवे ॥१८॥ फिर खड्ग हाथ में लेकर (गौर्गौर्गौः) ऐसा दाता पूजक कहे ॥१९॥ यदि संज्ञपन चाहता हो तो पूज्य आचार्यादि (हतोमेपाप्मा०) इ-त्यादि प्रैषवाक्य यजमान से कहे ॥ २० ॥ (मधुपर्क में पशु संज्ञपन सदा से ही विकल्पित है । सत्ययुगादि में भी नियत नहीं हैं पर कलियुग में (लोक-विक्रुष्टमेवच) इत्यादि मन्वादि के वचनानुसार सर्वथा ही वर्जित है कथमपि कर्त्तव्यनहींफिर भिन्न२ गोत्र वाले चार ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ २१ अथवा पशु का अङ्ग रूप पायस नाम खीर मधुपर्क पूजन में करा लेवे क्योंकि दूध भी

कारयेत् नामांसो मधुपर्कइति श्रुतिः ॥ २२ ॥ यद्युत्सृजेत्-मातारुद्राणांदुहितावसूनांस्वसादित्यानाममृतस्यनाभिः। प्र-नुवोचंचिकितुषेजनाय मागामनागामदितिंवधिष्ट । भूर्भुवः-स्वरोमुत्सजतु तृणान्यत्तु ॥ २३ ॥ अथालङ्करणमलङ्करण-मसि सर्वस्माअलंमेभूयासम् ॥ २४ ॥ प्राणपानौमेतर्पय(स-मानव्यानौमेतर्पयउदानरूपेमेतर्पय)सुचक्षा अहमक्षीभ्यां भू-यासं,सुवर्चा मुखेन सुश्रुत्कर्णाभ्यां भूयासमिति यथालिङ्ग-मङ्गानि संमृशति ॥ २५ ॥ अथ गन्धोत्सदने वाससी ॥२६॥ परिधास्ये यशोधास्ये दीर्घायुत्वाय जरदष्टिरस्तु । शतं जीवेम शरदः पुरूचीरायस्पोषमभिसंव्ययिष्ये ॥ यशसा माद्यावा-पृथिवी यशसेन्द्राबृहस्पती । यशोभगश्च मारिषद्यशोमा प्रति मुच्यताम् ॥ इत्यहतं वासः परिधत्ते ॥२७॥ कुमार्याः प्रमदने

पशु का अंश होने से उस में कारण रूप से सभी विद्यमान है । श्रुति में लिखा है कि मांस के विना मधुपर्क नहीं होता सो खीर बना लेने परभी पश्वंश होने से मधुपर्क का श्रुत्यर्थ चरितार्थ है ॥ २२ ॥ तथा विकल्पित पक्षान्तर में गौ को छोड़ देना चाहे तो (मातारुद्राणां०) इत्यादि मन्त्र पढ़ के छुड़वा देवे ॥२३॥ फिर (अलंकरणमु०) मन्त्र पढ़ के मालादि आभूषण पहने (प्राणापानौ०) पढ़ के नासिका के दोनों छिद्रों का स्पर्श करे (समानव्या०) से नाभिका (उदानरूपे०) से कण्ठ का (सुचक्षा०) से दोनों आंखों का (सुवर्चा मु०) से मुख का और (सुश्रुत्कर्णाभ्यां०) से दोनों कानों का स्पर्श करे प्रथम दहिने फिर बायें कान को दहिने हाथ से (सर्वत्र) स्पर्श करे ॥ २५ ॥ फिर स्नातक पुरुष पूर्व कही स्नानविधि से पहिले ही मधुपर्क प्राशन करलेने पर विवाह के समय शरीर में चन्दन और सुगन्ध तैलादि सहित उ-बटन लगावे ऐसा किन्हीं आचार्यों का मत है और विवाहानन्तर स्नानवि-धि करे । २६ ॥ और (परिधास्ये०) मन्त्र से चीरेदार नयी धोती पहिने त-था (यशसामा०) मन्त्र से एक चीरे दार नया डुपट्टा ओढ़े ॥ २७ ॥ कुमारी

भगमर्यमणं पूषणं त्वष्टारमिति यजति ॥ २८ ॥ प्राक्स्विष्ट-कृतश्चतस्रो अविधवानन्दी रूपवादयन्ति ॥ २९॥ अभ्यन्तरे कौतुके देवपत्नीर्यजति ॥३०॥ इति नवमः खण्डः समाप्तः ॥

प्रागुदञ्चं लक्षणमुद्धृत्यावोक्ष्य, स्थण्डिलं गोमयेनोप लिप्य मण्डलं चतुरस्रं वा, अग्निं निर्मथ्याभिमुखं प्रणयेत् (तत्र ब्रह्मोपवेशनम्) ॥१॥ दर्भाणां पवित्रे मन्त्रवदुत्पाद्ये-मंस्तोममर्हतइत्यग्निं परिसमुह्य पर्युक्ष्य परिस्तीर्य पश्चा-दग्नेरेकवद्बर्हिः स्तृणाति ॥ २ ॥ उदक्प्राक्तूलान्दर्भान्प्र-कृष्य दक्षिणांस्तथोत्तरानग्रेणाग्निं दक्षिणैरुत्तरानवस्तृणा-

जिस के साथ विवाह होता हो उस के क्रीड़ा स्थान में भग अर्यमा पूषा और त्वष्टा इन देवताओं के नाम से घी की आहुति देवे ॥ २८ ॥ स्विष्टकृत् आहु-ति से पहिले जो विधवा न हों ऐसी सौभाग्यवती चार स्त्रियां ढोल आदि मांगलिक वाजे बजावें और मंगल रूप भजन गावें ॥२९॥ कन्या का पिता वा भाई घर के भीतर नियत किये कौतुकागार कौतुक स्थान में (देवपत्नीभ्यः स्वाहा) मन्त्र से होम करे अथवा सिनीवाली से लेकर कुहूपर्यन्त देव पत्नियों के लिये आहुति देवे ॥ ३० ॥ यह नवम खण्ड समाप्त हुआ ॥

पश्चिम से पूर्व की ओर को उदक्संस्थ पांच रेखा और दक्षिण से उत्तर को एक रेखा बीच में स्फ्य वा स्रुव मूल द्वारा कर के वहां से कुछ मट्टी अ-नामिकांगुष्ठ द्वारा ईशान में फेंक कर थोड़ा जल सेचन करके बिछायी हुई शुद्ध मट्टी की गोलाकार वा चौकोण वेदी को गौ के गोवर से लीप कर उस में अ-रणी द्वारा मन्थन करके अथवा पुरुष १ ख० १७ सू० १ । २ में कहे जन्माग्नि को पूर्वाभिमुख हो के स्थापित करे (उस से दक्षिण में वरण करके ब्रह्मा को बैठावे) ॥ १ ॥ मन्त्र पूर्वक दाभों के पवित्र बना के (इमंस्तोमं०) मन्त्र से अग्नि के सब ओर झाड़ के ईशान कोण से लेके प्रदक्षिण सब ओर जल सेचन कर सब ओर कुश बिछा के अग्नि से पश्चिम में एकावृत्ति कुश बिछावे ॥२॥ वेदि से उत्तर और दक्षिण में पूर्व को अग्रभाग करके अग्नि से पूर्व में उत्तर को त-

ति ॥ ३ ॥ दक्षिणतोऽग्नेर्ब्रह्मणे संस्तृणात्यपरं यजमानाय पश्चार्द्धं पत्न्यै अपरमपरं शाखोदकधारयोर्लाजाधार्याश्च पश्चाद्युगधारस्य च ॥ ४ ॥ स्योनापृथिविभवेत्येतयाऽवस्थाप्य शमीमयीः शम्याः कृत्वाऽन्तर्गोष्ठेऽग्निमुपसमाधाय भर्त्ता भार्यामभ्युदानयति ॥ ५ ॥ वाससोऽन्ते गृहीत्वा-अघोरचक्षुरपतिघ्न्येधि शिवापशुभ्यः सुमनाः सुवर्चाः । वीरसूर्देवकामा स्योना शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे॥ इत्यभिपरिगृह्याभ्युदानयति ॥ ६॥ उत्तरेण रथं वाऽनो वाऽनुपरिक्रम्यान्तरेण ज्वलनवहनावतिक्रम्य दक्षिणस्यां धुर्युक्तस्य युगतन्मनोऽधस्तात्कन्यामवस्थाप्य - शम्यामुत्कृष्य

या पश्चिम में दक्षिणों के साथ मिलते हुये उत्तराग्र विछावे ॥ ३ ॥ अग्नि से दक्षिण में ब्रह्मा के लिये विछाये आसन पर और ब्रह्मा से पश्चिम में यजमान के आसन पर तथा यजमान से पश्चिम में पत्नी के आसन पर कुश विछावे । ब्रह्मा यजमान और पत्नी से दक्षिण में आम्र पल्लव शाखा धारण करने वाले के लिये और उस से पश्चिम में जल भरे कलश को धारण करने वाले के लिये कुश विछावे तथा इन से पश्चिम २ को लाजा धारण करने वाली सौभाग्यवती स्त्री और हल का जुआ [युग] धारण करने वाले के लिये कुश विछावे ॥ ४ ॥ फिर (स्योनापृथिवि०) मन्त्र से शाखाधार आदि चारों को स्थापित करके पहिले से न बनायी हों तो शमी-(छोंकर) वृक्ष की शम्या प्रादेश मात्र (सैलें) बना कर कोठे के भीतर अग्नि को प्रज्वलित करके निम्न रीति से वर अपनी पत्नी को अग्नि के समीप लावे ॥ ५॥ पत्नी के दुपट्टे का छोर पकड़ के (अघोर चक्षु०) इत्यादि मन्त्र पढ़े पश्चात् दोनों बाहु से उठा कर लावे ॥ ६ ॥ खड़े हुये रथ वा शकट(छकड़ा) के उत्तर से दक्षिण की ओर को परिक्रमा कर वा अग्नि और गाड़ी के बीच से निकल के युग (जुआं) के जो दोनों भाग बैलों के कन्धे पर रहते हैं उन के बीच को धुर् कहते हैं उस धुर् और शम्या (सैल) के छिद्र के बीच उत्तर को नीचे क-

हिरण्यमन्तर्धाय हिरण्यवर्णाः शुचयइति तिसृभिरद्भिरभिषिच्य,अत्रैव वाणशब्दं कुरुतेति प्रेष्यति ॥७॥ अथास्यै वासः प्रयच्छति–या अकृन्तन्या अतन्वन्या आवन्या अवाहन्न् । याश्च ग्ना देव्योऽन्तानभितोऽततनन्त । तास्त्वा देव्यो जरसे संव्ययन्त्वायुष्मतीदं परिधत्स्व वासः ॥ इत्यहतं वासः परिधाप्यान्वारब्ध्याघारावाज्यभागौ हुत्वा । अग्नये जनविदे स्वाहेत्युत्तरार्द्धे जुहोति । सोमाय जनविदे स्वाहेति दक्षिणार्द्धे । गन्धर्वायजनविदे स्वाहेति मध्ये ॥८॥ युक्तो वह, यदाकूतमिति द्वाभ्यामग्निं योजयित्वा नक्षत्रमिष्ट्वा नक्षत्र देवतां यजेत्तिथिं तिथिदेवतामृतुमृतुदेवतां च ॥ ९ ॥

न्या को स्थित कर शम्या को छिद्र से निकाल के उस युग छिद्र में सुवर्ण धरके (हिरण्यवर्णाः०) इत्यादि तीन ऋचा पढ़ २ के छिद्र के ऊपर से कुशों वा आम के पत्तों द्वारा कन्या के शिर पर अभिषेक करे और इसी अवसर में (वाण शब्दं कुरुत) ऐसे वाक्य द्वारा वादित्र (बाजे) बजाने की आज्ञा देवे ॥७॥ फिर पत्नी को अग्नि के पास उठाकर लावे और (या अकृन्तन्०) इत्यादि मन्त्र पढ़ के चीरेदार साड़ी [जो किसी स्थान में से फाड़ी न गयी हो] पत्नी को पहनावे । तदनन्तर पत्नी के अन्वारम्भ करने पर प्रजापति और इन्द्र देवता के लिये दो आघार और अग्नि तथा सोम देवता के लिये दो आज्य भाग की आहुति दे कर (अग्नयेजन०) से वेदिस्थ प्रज्वलित अग्नि के उत्तरार्द्ध में (सोमाय जन०) से दक्षिणार्द्ध में और (गन्धर्वाय जन०) से बीच अग्नि में आहुति देवे ॥ ८ ॥ पश्चात् (युक्तो वह० । यदा कूतं०) इन दो मन्त्रों से अग्नि देवता को युक्त नाम संबोधित करके जिस तिथि में वह काम विवाह होता हो उस दिन जो नक्षत्र हो उस नक्षत्र का जो देवता हो तथा प्रतिपदादि जो तिथि हो उस के नाम से और उस तिथि के देवता के नाम से तथा उस समय जो ऋतु हो और उस ऋतु का जो देवता हो उन सब के ना-

सोमोददद्गन्धर्वाय गन्धर्वोददग्नये। रयिं च पुत्रांश्चादादग्निर्मह्यमथोइमाम् ॥ अग्निरस्याः प्रथमो जातवेदाः सोऽस्याः प्रजां मुञ्चतु मृत्युपाशात्। तदिदं राजा वरुणोऽनुमन्यतां यथेदं स्त्रीपौत्रमघन्न रुद्रियाय-स्वाहा-इति॥ हि-हिरण्यगर्भइत्यष्टाभिः प्रत्यृचमाज्याहुतीर्जुहुयात् ॥ १०॥ येन च कर्मणेच्छेत्तत्र जयान्जुहुयात् जयानां च श्रुतिस्तां यथोक्ताम् ।आकूत्यै त्वा स्वाहा।भूत्यै त्वा स्वाहा । प्रयुजे त्वा स्वाहा ।नभसे त्वा स्वाहा।अर्यम्णे त्वा स्वाहा। समृद्ध्यै त्वा स्वाहा। जयायै त्वा स्वाहा।कामाय त्वा स्वाहेत्यृचास्तोमं,प्रजापतयइति च ॥ ११ ॥ शुचिः प्रत्यङ्ङुपयन्ता तां-समीक्षस्वेत्याह ॥ १२॥ तस्यां समीक्षमाणायां जपति-ममव्रते ते हृदयं दधातु मम चित्तमनुचित्तं तेऽअस्तु । मम वाचमेकमना जुषस्व प्रजापतिष्ट्वा नियुनक्तु मह्यम् ॥ इति॥१३॥

न से छः आहुति देवे ॥ ९ ॥ पश्चात् (सोमोददद्०) इत्यादि दो ऋचाओं से एक आहुति दे कर (हिरण्यगर्भः०) इत्यादि आठ ऋचाओं से घी की आठ आहुति देवे ॥ १० ॥ जिस कर्म से कार्य की सिद्धि चाहता हो वहां २ जया होम करे । जया संज्ञक आहुतियों की यथोक्त श्रुति हैं कि शत्रु के विनाशार्थ भी जया होम होता है ।(आकूत्यै०) इत्यादि जया होम की आठ आहुति दे कर (ऋचास्तोमं०) मन्त्र से नवमी और (प्रजापतये स्वाहा) से दशमी आहुति देवे ॥ ११ ॥ पवित्र हुआ वर (अर्थात् स्त्री के साथ कामाभिलाष रहित धर्मनिष्ठ मन को रख के) पश्चिम को मुख करके पत्नी से कहे (समीक्षस्व) मुझे देखो ॥ १२ ॥ वह पत्नी वर को देखती हो तब वर (ममव्रतेते०) इत्यादि मन्त्र को पत्नी की ओर देखता हुआ पढ़े ॥ १३ ॥

कानामासीत्याह ॥१४॥ नामधेये प्रोक्ते—देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यांपूष्णो हस्ताभ्यां हस्तं गृह्णाम्यसाविति हस्तं गृह्णन्नाम गृह्णाति। प्राङ्मुख्याः प्रत्यङ्मुख ऊर्ध्वस्तिष्ठन्नासीनाया दक्षिणमुत्तानं दक्षिणेन नीचारिक्तमरिक्तेन ॥ यथेन्द्रो हस्तमग्रहीत्सविता वरुणो भगः। गृभ्णामि ते सौभगत्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथासत्। भगो अर्यमा सविता पुरन्धिर्मह्यं त्वादुर्गार्हपत्याय देवाः ॥ याग्रे वाक्समवदत पुरा देवासुरेभ्यः। तामद्य गाथां गास्यामो यास्त्रीणामुत्तमं मनः ॥ सरस्वती प्रेदमव सुभगे वाजिनीवति। यां त्वा विश्वस्य भूतस्य भव्यस्य प्रगायाम्यस्याग्रतः ॥ अमोऽहमस्मि सा त्वं सा त्वमस्याप्यमोऽहम्। द्यौरहं पृथिवी त्वमृक्त्वमसि सामाहम्। रेतोऽहमस्मि रेतो धत्तम् ॥ ता एव विवहावहै पुंसे पुत्राय कर्त्तवै। श्रिये पुत्राय वेधवै। रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्याय ॥१५॥ अग्निदक्षिणमानीयाग्नेः पश्चात्—एतमश्मानमातिष्ठतमश्मेव युवां स्थिरौ भवतम्। कृण्वन्तु विश्वेदेवा आयुर्वां शरदः शतम् ॥ इति दक्षिणाभ्यां पद्भ्या

इस के पश्चात् वर कन्या से कहे कि (का नामसि) तुम्हारा क्या नाम है ॥१४॥ जब कन्या अपना नाम बोले तब (देवस्य त्वा०) मन्त्र पढ़के निम्न रीति से कन्या का हाथ पकड़े और मन्त्र के अन्त में पढ़े (असौ) शब्द के स्थान में कन्या का नाम सम्बोधनान्त बोले। कन्या का मुख पूर्व को वर का पश्चिम को हो कन्या बैठी हो वर खड़ा हो कन्या का दहिना हाथ रीता उत्तान ऊपर को और वर के दहिने हाथ में कोई फलादि हो इस प्रकार अपने दहिने हाथ से कन्या का दहिना हाथ अंगुठा अंगुलियों सहित पकड़के (यथेन्द्रोहस्तमग्रहीत०) इत्यादि मन्त्र पढ़े॥१५ अन्य कोई पुरुष कन्या को वर से दक्षिण में और अग्नि से पश्चिम में खड़ी करके कन्या वर दोनों के दहिने पगों को एक पत्थर की शिला पर धरवाता हुआ (ए-

मश्मानमास्थापयति ॥१६॥ यथेन्द्रः सहेन्द्राण्य । अवारुहद्ग-न्धमादनात् । एवं त्वमस्मादश्मनोऽअवरोह सह पत्न्या ॥आरोहस्व समे पादौ प्रपूर्व्यायुष्मती कन्ये पुत्रवती भव॥-इत्येवं द्विरास्थापयति ॥१७॥चतुःपरिणयति ॥१८॥ समितं संक-ल्पेथामिति पर्याये पर्याये ब्रह्मा ब्रह्मजपंजपेत् ॥ १९ ॥

इति दशमः खण्डः ॥

ततो यथार्थं कर्मसंनिपातो विज्ञेयः ॥१॥ अर्यम्णेऽग्नयेपू-ष्णे (ऽग्नये) वरुणाय च ब्रीहीन्यवान्वाऽभिनिरुप्य प्रोक्ष्य लाजा भृज्जति ॥२॥ मात्रे प्रयच्छति सजाताया अविधवायै ॥ ३ ॥ अथास्यै द्वितीयं वासः प्रयच्छति तेनैव मन्त्रेण ॥४॥

तमश्मान०) इत्यादि मन्त्र पढ़े ॥१६॥ फिर (यथेन्द्रः स०) मन्त्र पढ़ के दोनों के पगों को नीचे उतरवावे । पश्चात् उक्त प्रकार (एतमश्मा०) मन्त्र से फिर पा-षाण शिलापर दोनों के दहिने पग धरा के (यथेन्द्रः०) मन्त्र से फिर उतरवा वे ऐसे दो वार करके ॥१७॥ पश्चात् चार वार अग्नि के प्रदक्षिण परिक्रमा आ-गे कहे लाजाहोम के साथ कन्या वर दोनों करें ॥१८॥ और (समितं संकल्पेथां०) मन्त्र का प्रत्येक परिक्रमा के साथ एकरवार ब्रह्मा जप करे ॥१९॥ यह दशवां ख-ण्ड समाप्त हुआ ॥

भाषार्थः—जिस कर्म का जहां प्रयोजन हो उसी अवसर में उस का अनु-ष्ठान करना चाहिये । अर्थात् सूत्रकार किसी अन्यत्र करने के काम को अन्यत्र भी कह देते हैं पर करने वाले को मौका देखकर यथावसर करना चाहिये इसी लिये इन सूत्रों में लिखे विवाहादि कर्म सिलसिलेवार पद्धति बने विना हो नहीं सकते हैं ॥ १ ॥ अर्यमाग्नि पूषाग्नि और वरुणाग्नि देवताके लिये लाजा भूंजने के अर्थ धान वा जौ का ग्रहण करके लाजा भूंजे ॥ २ ॥ वे भुंजे हुए लाजा वा जौ कन्या की माता को वा जो विधवा न हो ऐसी क-न्यामाता की सहोदर बहिन कन्या की मौसी को देवे ॥ ३ ॥ इस के अन-न्तर उसी मन्त्र से कन्या को ऊपर से ओढ़ने के लिये द्वितीय वस्त्र देवे ॥४॥

दर्भरज्ज्वा—इन्द्राण्याः संनहनमित्यन्तौ समायम्य पुमांसं ग्रन्थिं बध्नाति ॥ ५ ॥ सं त्वा नह्यामि पयसा पृथिव्याः सं त्वा नह्याम्यद्भिरोषधीभिः । सं त्वा नह्यामि प्रजया धनेन सा संनद्धा सनुहि भागधेयम् ॥ इत्यन्तरतो वस्त्रस्य योक्त्रेण कन्यां संनह्यते ॥ ६ ॥ अथैनान्युपकल्पयते–शूर्पं लाजा इषीका अश्मानमाञ्जनम् ॥ ७ ॥ चतसृभिर्दर्भेषीकाभिः शरेषीकाभिर्वा समुञ्जाभिः सतूलाभिरित्येकैकया त्रैककुभस्याञ्जनस्य संनिष्कृष्य–वृत्रस्यासि कनीनिकेति भर्त्तुर्दक्षिणमक्षि त्रिःप्रथममाङ्क्ते । तथापरं, तथा पत्न्याः शेषेण तूष्णीम् ॥ ८ ॥ दिशि शलाकाः प्रविध्यति–यानि रक्षांस्यभितो व्रजन्त्यस्या वध्वा अग्निसकाशमागच्छन्त्याः । तेषामहं प्रतिविध्यामि चक्षुः स्वस्ति वध्वै भूपतिर्दधातु ॥ इति ॥ ९ ॥ लाजाः पश्चा-

फिर (इन्द्राण्याः संनहन०) इस मन्त्र को पढ़ के आचार्य दाभ की रस्सी के दोनों छोर मिलाकर प्रदक्षिण रीति से गांठ देवे ॥ ५ ॥ फिर (संत्वानह्यामि०) मन्त्र पढ़ के कन्या के कटि भाग में पहने हुए साड़ी वस्त्र के बीच (दोनों ओर ऊपर नीचे वस्त्र रहे) में वह दर्भ रज्जु प्रदक्षिण लपेटे । यह पत्नी की दीक्षार्थ मेखला है ॥ ६ ॥ इस के अनन्तर सूप खीलें दाभ वा मूंज की चार सींकें पत्थर की शिला और आखों में लगाने का सुरमा इन सब को सम्हाल के रक्खे ॥ ७ ॥ जिन में मूंज और अग्रभाग में फूला घुआ लगा हो ऐसी पूरी लम्बी दाभ की वा मूंज की चार सींकों के छोर ठीक करके उन एक २ में पहाड़ी सुरमा लगा के पहिले कन्या एक सींक से वर की दहिनी आंख में (वृत्रस्यासि०) मन्त्र से तीनवार सुरमा लगावे तथा इसी प्रकार वायीं आंख में दूसरी सींकसे लगावे फिर शेष बची दो सींकों से वर पत्नी की दहिनी वायीं आंखों में विना मन्त्र सुरमा लगावे ॥ ८ ॥ फिर (यानि रक्षांसि०) मन्त्र पढ़ के सब दिशाओं में एक २ सींक जिन से सुरमा लगाया है प्रदक्षिण क्रम से वर फेंके ॥ ९ ॥

दग्नेरुपसाद्य शमीपर्णैः संसृज्य शूर्पे समं चतुर्धा विभज्या-ग्रेणाग्निं पर्याहृत्य लाजाधार्यै प्रयच्छति ॥ १० ॥ लाजा भ्राता ब्रह्मचारी वाऽञ्जलिनाऽञ्जल्योरावपति ॥ ११ ॥ उपस्तरणाभिघारणैः संपातं ता अविच्छिन्नं जुहुतः—अर्यमणं नुदेवं कन्याअग्निमयक्षत। सोऽस्मान्देवोऽअर्यमा प्रेतोमुञ्चतुमामुतः स्वाहा ॥ तुभ्यमग्नेपर्यवहन्त्सूर्यां वहतुनासह। पुनःपतिभ्योजायांदा अग्नेःप्रजयासह ॥ पुनःपत्नीमग्निरदादायुषासहवर्चसा।दीर्घायुरस्याः पतिर्जीवातिशरदःशतम्॥ इयंनार्युपब्रूते (ऽग्नौ) लाजानावपन्तिका। दीर्घायुरस्तुमेपतिरेधन्तांज्ञातयोमम ॥ इति (जपन्ति) ॥ १२ ॥ एवंपू-

तदनन्तर लाजा नाम धान की खीलों को अग्नि से पश्चिम में रखके उन में शमी (छोंकर वृक्ष) के पत्ते मिलाकर उन को सूप में चार भाग बराबर पृथक् २ रखके अग्नि के उत्तर पूर्व से प्रदक्षिण लाके लाजा के सूप को दक्षिण की ओर खड़ी लाजा धारण करने वाली स्त्री को देवे ॥१०॥ कन्या का भाई वा ब्रह्मचारी विद्यार्थी कन्यावर दोनों की मिलाई हुई अञ्जुली में लाजा अपनी अंजुली में लेकर गिरावे ॥११॥ लाजा गिराने से पूर्व अञ्जुली में उपस्तार रूप घी लगावे फिर लाजा गिरा के खीलों के ऊपर से घी छोड़े वह अभिघारण कहाता है फिर बीच में न रुकते हुए धार बांध कर (अर्यमणं०) आदि मन्त्रों से दोनों कन्या वर होम करें।(अर्यमणंनु०) से लेकर (प्रजयासह) तक पहिले वर पढ़े। फिर (पुनः पत्नीम्०) मन्त्र को अध्वर्यु पढ़े (इयं नार्युपब्रूते०) मन्त्र को कन्या पढ़े चारों मन्त्रों के पाठ के साथ धीरे २ निरन्तर दोनों कन्या वर लाजा गिराते जावें यह एक आहुती हुई ॥ १२॥ फिर पूर्व लिखी अग्नि की परिक्रमा दोनों एक वार करें परिक्रमा के साथ (समितं०) मन्त्र को ब्रह्मा पढ़े (अर्थात् वहां क्रम यह है कि प्रथम वेदि में रेखा करे अग्निस्थापन, दर्भ पवित्र बनाना, अग्नि का परिसमूहनादि स्थापनान्त, स्रुवादि पात्रस्थापन, लाजा

षणंनुदेवं, वरुणंनुदेवम् ॥१३॥ येनद्यौरुग्रेत्यादय उद्वाहे होमाः । जयाभ्यातानाः संततिहोमा राष्ट्रभृतश्च ॥१४॥ आकूतायस्वाहेति जयाः । प्राचीदिग्वसन्तंऋतु-रित्यभ्यातानाः । प्राणादपानंसन्तन्विति संततिहोमाः । ऋताषाड्ऋतधामेति (द्वादश) राष्ट्रभृतश्च ॥१५॥ त्रातारमिन्द्रं, विश्वादित्याइति मङ्गल्ये ॥ १६ ॥ लाजाः कामेन च थं स्विष्टकृतमिति ॥१७॥ अथैनां प्राचीं सप्तपदानि प्रक्रमयति । एकमिषे । द्वेऊर्जे । त्रीणि प्रजाभ्यश्चत्वारि रायस्पोषाय । पञ्च भवाय । षड्ऋतुभ्यः । सखासप्तपदीभव सुमृडीकासरस्वती । मातेव्योमसंदृशि ॥ विष्णुस्त्वानुन्नयत्विति सर्वत्रानुषजति ॥१८॥ पश्चादग्नेरोहिते चर्मण्यानडुहे प्राग्ग्रीवे लोमतो दर्भानास्तीर्य तेषु

निर्वपणादि, सूप आदि का स्थापन, फिर आज्यग्रहणादि समिदाधान पर्यन्त (पु० २ खं० २) में कहे अनुसार फिर (ऋचास्तोमं०) पर्यन्त आघारहोमादि । फिर हस्तग्रहणान्त करके अश्मास्थापन लाजाहोमादिकरे) फिर पूषा और वरुण का ऊह अर्यमाके स्थान में करके (पूषणंनुदेवं कन्या०) इत्यादि मन्त्रों से दो वार लाजा होम परिक्रमा और अश्मारोहणावरोहण फिर करें ॥ १३ ॥ (येन द्यौरुग्रा०) इत्यादि होम विवाह में करे तथा (आकूताय०) इत्यादि पूर्वोक्त जयाहोम (प्राचीदिग्व०) इत्यादि अभ्यातान (प्राणादपानं०) इत्यादि संतति होम और (ऋताषाड्०) इत्यादि बारह आहुति राष्ट्रभृत् होम भी विवाह में करे ॥ १४ । १५ ॥ (त्रातारमिन्द्रं०) (विश्वादित्या०) इन दो मन्त्रों से मंगल आहुति करे ॥१६। फिर (अर्यमणंनु०) इत्यादि पूर्वोक्त मन्त्रों में अर्यमाके स्थान में काम शब्द का ऊह करके कि (कामंनुदेवं०) चौथी स्विष्टकृत् स्थानी लाजाहुति करे ॥ १७ ॥ फिर इस कन्या को (एकमिषे०) इत्यादि के आगे (भवसुमृडीका०) से (सुन्नयतु) पर्यन्त मंत्र सब में लगा २ के एक २ मन्त्र से एक २ पग पूर्व को चलावे ॥ १८ ॥ तदनन्तर अग्नि से पश्चिम में लाल बैल के चर्म को पूर्व को शिर तथा ऊपर को लोम करके बिछावे उस पर दाभ

वधूमुपवेशयत्यपिवा दर्भेष्वेव ॥१९॥ इमंविष्यामिवरुणस्य-पाशं यज्जग्रन्थसविताऽसत्यधर्मा । धातुश्चयोनौसुकृतस्य-लोकेऽरिष्टांमासहपत्याद्धातु ॥ इति योक्त्रपाशं विधाय वा-ससोऽन्ते बध्नाति ॥२०॥ अनुमतिभ्यां व्याहृतिभिश्च। त्वंनो अग्ने। सत्वंनोअग्ने। अयाश्चाग्नेऽसीतिच॥२१॥शमीमयीस्ति-स्रोऽक्ताः समिधः । समुद्रादूर्मिरित्येताभिस्तिसृभिः स्वाहा-कारान्ताभिरादधाति ॥२२॥ अक्षतसक्तूनां दध्नश्च समवदा-येदंहविः प्रजननंमइति च हुत्वा। वितेमुञ्चामिरशनांविर-श्मीनिति च हुत्वा पवित्रेऽनुप्रहृत्याऽऽज्येनाभिजुहोति ॥२३॥ एधोऽस्येधिषीमहीति समिधमादधाति । समिदसिसमे-धिषीमहीति द्वितीयाम् ॥२४॥ अपोअद्यान्वचारिषमित्युप-तिष्ठते ॥२५॥ कुम्भादुदकेनापोहिष्ठीयाभिर्मार्जयन्ते ॥ २६॥

बिछाके वधू को बैठावे अथवा केवल दाभों पर बैठावे ॥१९॥ फिर (इमंविष्यामि०) इस मन्त्र को पढ़के कन्या के कटिभाग में बांधी हुई दाभ की रस्सी को खोल कर ओढ़े हुए वस्त्र के छोर में बांध देवे ॥२०॥ फिर (अनुमति०) के लिये दो, तीन व्याहृति और (त्वंनोअग्ने०) इत्यादि तीन आहुति देवे ॥२१॥ तदनन्तर शमी (छोंकर) वृक्ष की तीन समिधा घी में डुबो के (समुद्रादू०) इत्यादि स्वाहा-कारान्त तीन मन्त्रों से अग्नि में चढ़ावे ॥ २२ ॥ पश्चात् विना कूटे जौ के सत्तू और दही में से दो २ आहुत्यंश अवदान लेकर (इदंहविःप्र०) मन्त्र से होम करके पवित्रों में घी लगा के पवित्रों का होम करदे और (वितेमुञ्चा-मि०) इत्यादि मन्त्रों से घी की आहुति करे ॥ २३ ॥ पश्चात् (एधोऽसि०) मन्त्र से एक और (समिदसि०) मन्त्र से दूसरी समिधा अग्नि में चढ़ावे ॥२४॥ फिर (अपोअद्यान्व०) मन्त्र से अग्नि का उपस्थान करे ॥२५॥ फिर कुम्भ जल भरा कलश धारण करने वाले के कलश से दाभ वा आम के पत्तों द्वारा जल ले २

वरो दक्षिणा ॥२७॥ इत्येकादशः खण्डः समाप्तः ॥

सुमङ्गलीरियंवधूरिमांसमेतपश्यत । सौभाग्यमस्यैदत्वा याथास्तंविपरेतन ॥ इति प्रेक्षकान् व्रजतोऽनुमन्त्रयते ॥१॥ अत्रैव सीमन्तं करोति । त्रिश्येतया शलल्या समूलेन वा दर्भेण । संनाहनाभेत्येतया ॥२॥ अथाभ्यञ्जन्ति । अभ्यज्य-केशान्सुमनस्यमानाः प्रजावतीर्यशसेवहुपुत्राअघोराः । शिवा भर्त्तुःश्वशुरस्यावदायायुष्मतीःश्वश्रुमतीश्चिरायुः ॥ इति॥३॥ जीवोर्णायोपसमस्यति । समस्यकेशानकुजिलानघोरान् शि-वासखीभ्योभवसर्वाभ्यः । शिवाभवसुकुलोह्यमाना शिवाज-नेषुसहवाहनेषु ॥ इति ॥ ४ ॥ अथैनौ दधिमधु समश्नुतो यद्वा हविष्यं स्यात् ॥ ५ ॥ तस्य स्वस्तिवाचयित्वा, समा-नावाआकूतानीति सह जपन्ति ॥ ६ ॥

कर (आपोहिष्ठा०) आदि तीन मन्त्रों से पत्नी का अभिषेक करे ॥२६॥ और श्रेष्ठ गौ आचार्य को दक्षिणा में देवे ॥२७॥ यह ग्यारहवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

भावार्थः—जो लोग विवाह देखने को आये हों फिर लौट कर अपने २ घर को जाते हों उन को देखता हुआ (सुमङ्गलीरियं०) मन्त्र पढ़े ॥१॥ इसी अ-वसर में वर अपनी पत्नी का सीमन्तोन्नयनकरे अर्थात् निम्न रीति से मांग भरे। तीन जगह श्वेत सेही के कांटे से अथवा जड़ सहित उखाड़े दाभ के गु-च्छे से (सैनाहनाम०) इस ऋचाको पढ़के मांग के केश दोनो ओर को करे ॥२॥ पश्चात् (अभ्यज्य केशान्०) मन्त्र पढ़ के वालों में तेल लगावे और कंकत (ककवा) से झाढ़े ॥ ३ ॥ फिर जीते हुये भेड़ा की ऊन से वनाये डोरे के साथ वालों को (समस्यकेशान्०) मन्त्र पढ़ के गूंथे अर्थात् वेनी बना के बांध देवे ॥ ४ ॥ अनन्तर दोनों पति पत्नी दही और शहद मिला कर एक साथ खावें अथवा हविष्यान्न खावें ॥ ५ ॥ खाने से पहिले पुरोहितादि से कहे (स्वस्ति-ब्रूइहि) तब ब्राह्मण मन्त्र सहित स्वस्ति कहे फिर ब्राह्मण सहित दोनों (स-मानावा०) मन्त्र को साथ ही पढ़ें ॥ ६ ॥

उभौ सह प्राश्नीतः ॥ ७ ॥ इति द्वादशः खण्डः ॥

पुण्याहे युङ्क्ते ॥ १ ॥ युञ्जन्तिब्रध्नमितिद्वाभ्यां युज्यमानमनुमन्त्रयते दक्षिणमथोत्तरम् ॥ २ ॥ अहतेन वाससा दर्भैर्वा रथं संमार्ष्टि ॥ ३ ॥ अङ्क्न्यङ्कावभितोरथंयेध्वान्तावाताअग्निमभिंयेसंचरन्ति । दूरेहेतिःपतत्रीवाजिनीवांस्तेनोऽग्नयःपप्रयःपालयन्तु ॥ इति चक्रेऽअभिमन्त्रयते ॥४॥ वनस्पतेवीड्वङ्ग इत्यधिष्ठानम् ॥५॥ सुकिंशुकंशल्मलिंविश्वरूपं हिरण्यवर्णंसुवृतंसुचक्रम् । आरोहसूर्येअमृतस्यलोकं स्योनंपत्येवहतुंकृणुष्व ॥ इत्यारोहयति ॥ ६ ॥ अनुमायन्तुदेवता अनुब्रह्मसुवीर्यम् । अनुक्षत्रंतुयद्बलमनुमामैतुयद्यशः॥ इति प्राङभिप्रयाय प्रदक्षिणमावर्त्तयति ॥७॥ प्रतिमायन्तुदेवताः प्रतिब्रह्मसुवीर्यम् । प्रतिक्षत्रंतुयद्बलं प्रतिमामैतुय-

फिर पति पत्नी दोनों दही सहत मिला के वा हविष्यान्न को साथ २ खावें ॥७॥ यह बारहवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

अब शुभ नक्षत्र और शुभ ग्रह युक्त पुण्य दिन अपने घर पत्नी को ले जाने के लिये रथादि को जोड़े ॥ १ ॥ जब कोई अध्वर्यु आदि रथ में घोड़े वा बैलों को जोड़ता हो तब उस की ओर देखता हुआ वर (युञ्जन्तिब्र०) मन्त्र पढ़े पहिले दहिने को जोड़ते समय फिर बायें को जोड़ते समय पृथक् २ दो बार मन्त्र पढ़े ॥ २ ॥ तदनन्तर चीरे दार नये वस्त्र से वा दाभों से रथादि सवारी को दोवार झाड़े ॥ ३ ॥ पश्चात् (अङ्कून्यङ्काव०) मन्त्र पढ़के रथ के पहियों का अभिमन्त्रण करे प्रथम दहिने का फिर बायें का ॥ ४ ॥ (वनस्पते०) मन्त्र पढ़ कर रथ पर बैठने के स्थान का अभिमन्त्रण करे ॥५॥ फिर (सुकिंशुकं०) मन्त्र पढ़ के पत्नी को अध्वर्यु आदि के द्वारा रथ पर चढ़वावे ॥ ६ ॥ फिर स्वयं रथ पर बैठ के (अनुमायन्तु०) मन्त्र पढ़ के पहिले थोड़ा पूर्व को रथ चला कर प्रदक्षिण क्रम से जाने के मार्ग पर फेर कर लावे ॥७॥ ठीक घर को जाने वाले रास्ते पर रथ चलता हो तब रथ को देखता हुआ

यश: ॥ इति यथास्तं यन्तमनुमन्त्रयते ॥ ८ ॥ अमङ्गल्यं चेदतिक्रामति । अनुमायन्त्विति जपति ॥ ९ ॥ नमोरुद्राय ग्रामसदइति ग्रामे । इमारुद्रायेति च ॥ १० ॥ नमोरुद्रायैकवृक्षसदइत्येकवृक्षे । ये वृक्षेषु शष्पिञ्जराइति च ॥११॥ नमोरुद्राय श्मशानसदइति श्मशाने । येभूतानामधिपतयइति च ॥ १२ ॥ नमोरुद्राय चतुष्पथसदइति चतुष्पथे । येपथांपथिरक्षयइति च ॥ १३ ॥ नमोरुद्राय तीर्थसदइति तीर्थे । येतीर्थानि प्रचरन्तीति च ॥ १४ ॥ यत्रापस्तरितव्या आसीदति । समुद्रायवैणवेसिन्धूनांपतयेनमः । नमोनदीनां सर्वासांपतये । विश्वाहाजुषतांविश्वकर्मणामिदंहविः स्वः स्वाहेत्यप्सूदकाञ्जलीन्निनयति ॥ अमृतं वा आस्ये जुहोम्यायुः प्राणेऽप्यमृतं ब्रह्मणा सहमृत्युंतरात । मासहादिति रिष्टिरिति मुक्तिरिति मक्षीयमाणः सर्वंभयं नुदस्वस्वाहेति

(प्रतिमायन्तु देव०) मन्त्र को पढ़े ॥ ८ ॥ यदि मार्ग में कहीं श्मशान, कूड़ा आदि का ढेर और अनिष्ट घृणित अमंगल वस्तु के समीप हो के निकलने पड़े तो (अनुमायन्तु०) इत्यादि मन्त्र का जप करे ॥ ९ ॥ यदि ग्राम में हो कर निकले तो (नमोरुद्राय ग्राम०) तथा (इमा रुद्राय०) इन दो मन्त्रों का जप करे ॥ १० ॥ मार्ग में एक वृक्ष पड़े तो (नमो रुद्रायैकवृक्षसदे०) और (ये वृक्षेषु०) दो मन्त्रों को जपे ॥ ११ ॥ यदि मार्ग में श्मशान (मरघट) पड़े तो (नमो रु० । ये भूताना०) दो मन्त्रों को जपे ॥ १२ ॥ यदि चौराहा पड़े तो (नमो रुद्राय० । ये पथां०) इन दो मन्त्रों को जपे ॥ १३ ॥ यदि मार्ग में कोई घाट पड़े तो (नमो रुद्राय० । ये तीर्थानि०) दो मन्त्रों को जपे ॥ १४ ॥ यदि नदी आदि पार उतरने योग्य जलाशय आवे तो अंजली से जल भरकर (समुद्राय वै०) मन्त्र पढ़ के जलाशय में अंजुली के जल का होम कर देवे । फिर तीन वार अपने शिर आदि अङ्गों

त्रिः परिमृज्याचामति ॥ १५ ॥ यदि नावा तरेत्सुत्रामाणमिति जपेत् ॥ १६ ॥ यदि रथाक्षः शम्याणी वा रिष्येतान्यद्वा रथाङ्गं तत्रैवाग्निमुपसमाधाय जयप्रभृतिभिर्हुत्वा सुमङ्गलीरियं वधूरिति जपेत् । वध्वा सह । वधूं समेत पश्यत ॥ १७ ॥ व्युत्क्राम पन्थां जरितां जवेन । शिवेनवैश्वानरइडयास्याग्रतः । आचार्यो येनयेनप्रयातितेनतेनसह ॥ इत्युभावेव व्युत्क्रामतः ॥ १८ ॥ गोभिः सहास्तमिते ग्रामं प्रविशन्ति ब्राह्मणवचनाद्वा ॥ १९ ॥ इति त्रयोदशः खण्डः समाप्तः ॥

अपरस्मिन्नहः सन्धौ गृहान्प्रपादयीत ॥ १ ॥ प्रति ब्रह्म-

पर जल से मार्जन करके (अमृतं वा आस्ये०) मन्त्र पढ़के तीन वार आचमन करे ॥ १५ ॥ यदि नौका पर चढ़ के पार उतरना हो तो नौका पर चढ़ा हुआ (सुत्रामाणं०) मन्त्र का जप करे ॥ १६ ॥ यदि मार्ग में चलते २ रथ की धुरी सैल वा आरा आदि कोई रथ का अंग टूट फूट जावें तो (उस को वढ़ई से बनवाना यह भिन्न लौकिक काम है उस को तो सभी के तुल्य करे) पर विवाह के वेदि का अग्नि साथ (लाना चाहिये) लाया हो उस को प्रज्वलित कर आघार आज्यभाग के पश्चात् जयादि होम करके (सुमङ्गलीरि०) मन्त्र को पत्नी सहित पढ़े (इमां समेत) के स्थान में (वधूंसमेत) कहे ॥ १७ ॥ फिर स्त्री पुरुष दोनों (व्युत्क्रामपन्थां०) मन्त्र को पढ़ के रथ से उतरें और पृथक् २ चलें और फिर बैठ जावें ॥१८॥ सूर्यनारायण के अस्त होने पर जंगल से गौओं के घर आने के साथ विदा कराके लाये वराती लोग गांव में घुसें । यदि दिन वा अधिक रात जाने का समय हो तो ब्राह्मण की आज्ञा लेकर गांव में घुसें ॥ १९ ॥ यह तेरहवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

अब वधू के गृहप्रवेश की रीति दिखाते हैं। ठीक सन्ध्या के समय रथसे उतारके बहूको घरमें लावें (प्रति ब्रह्मन्०) मन्त्रको पढ़के यजमान बहूको रथसे उतारे॥२॥ उस समय दही चन्दनादि मंगल वस्तु कोई घरमें से लावे और मंगल सूचक मन्त्रादि का

ल्निति प्रत्यवरोहति ॥ २ ॥ मङ्गलानि प्रादुर्भवन्ति ॥ ३ ॥ गोष्ठात्संततामुलपराजिं स्तृणाति ॥४॥ रथादध्योपासनात्। येष्वध्येतिप्रवसन्येषुसौमनसंमहत्। तेनोपहूयामहे तेनोजानन्त्वागतम् ॥ इति तयाभ्युपैति ॥५॥ गृहानहंसुमनसः प्रपद्ये वीरंहिवीरवतः सुशेवा। इरांवहन्तीघृतमुक्षमाणास्तेष्वहंसुमनाः संवसाम ॥ इत्यभ्याहिताग्निं सोदकं सौषधमावसथं प्रपद्यते। रोहिण्या मूलेन वा यद्वा पुण्योक्तम् ॥६॥ पश्चादग्नेरोहिते चर्मण्यानडुहे प्राग्ग्रीवे लोमतो दर्भानास्तीर्य तेषु वधूमुपवेशयत्यपिवा दर्भेष्वेव ॥ ७ ॥ अथास्यै ब्रह्मचारिणमुपस्थ आवेशयति। सोमेनादित्या बलिनः सोमेन पृथिवी मही। असौ नक्षत्राणामेषामुपस्थे सोमआहितः ॥ इति ॥८॥ अथास्य तिलतण्डुलानां फलमिश्राणामञ्जलिं पूर-

उच्चारण घर में हो ॥ ३ ॥ रथ से लेकर घरके भीतर तक पूर्व को अग्रभाग कर २ बराबर निरन्तर कुश बिछावे ॥ ४ ॥ और अध्वर्यु (येष्वध्येति प्र०) मन्त्र को पढ़ता हुआ उन बिछाये कुशों पर बहू को घर में ले चले ॥ ५ ॥ फिर (गृहानहं सुमनसः०) मन्त्र को पढ़ते हुए एक जल भरा पात्र धान की खीलें आदि और विवाह के अग्नि को साथ लिये हुए घर में प्रवेश करें। प्रवेशके समय रोहिणी वा मूल नक्षत्र हो अथवा ज्योतिःशास्त्रानुकूल मुहूर्त्त हो ॥ ६॥ पहिले से बनाये कुण्ड में अग्नि का स्थापन करके उस अग्नि से पश्चिम में लाल बैलका चर्म पूर्व को शिर और ऊपर को लोम रख कर बिछावे उस पर दाभ बिछा के उन पर वा बैल का चर्म न मिले तो बिछाये हुए केवल दाभों पर बहू को बैठावे ॥७॥ फिर (सोमेनादित्या०) मन्त्र पढ़ के मृगचर्मादि धारण किये किसी ब्रह्मचारी को इस बहू की गोदी में बैठावे ॥ ८ ॥ तब कोई फल जिन में मिले हों ऐसे तिल और चावलों से ब्रह्मचारी की अंजुली भर कर बहू की गोदी से उठा देवे। इस के अनन्तर ध्रुव, अरुन्धती जीवन्ती और

यित्वोत्थाप्य । अथास्यै ध्रुवमरुन्धतीं जीवन्तीं सप्तर्षीनिति दर्शयेत् ॥९॥ अच्युताध्रुवाध्रुवपत्नी ध्रुवं पश्येम सर्वतः ॥ ध्रुवासःपर्वताइमे ध्रुवास्त्रीपतिकुलेयम् ॥ इति तस्यां समीक्षमाणायां जपति ॥ १० ॥ श्वोभूते प्राजापत्यं पयसि स्थालीपाकं श्रपयित्वा तस्य जुहोति (आज्यशेषे) ॥११॥ चक्रीवानडुहौवासे वाङ्मैतुतेमनः । चाक्रवाकं संवननं तन्नौ संवननंकृतम् ॥ इति यजमानस्त्रिः प्राश्नाति । अवशिष्टं तूष्णीं पत्नी॥१२॥अपराह्णे पिण्डपितृयज्ञः । स व्याख्यातः ॥१३॥संवत्सरं ब्रह्मचर्यं चरतो द्वादशरात्रं [त्रिरात्रमेकरात्रं] वा ॥१४॥ अथास्यै गृहान् विसृजेत् ॥१५॥ योक्त्रपाशं विषाय तौ संनिपातयेत् ॥ अपश्यंत्वातपसाचेकितानं तपसोजातंतपसोविभूतम् । इहप्रजामिहरयिंरराणः प्रजायस्वप्रजयापुत्रकाम ॥

सप्तर्षि इन नक्षत्रों को वहू को दिखावें सप्तर्षियों के बीचकी तारा जीवन्ती कहाती है ॥९॥ वह बहू जब ध्रुवादि को देखती हो तब वर (अच्युताध्रुवा०) इत्यादि मन्त्र का जप करे ॥१०॥ फिर अगले दिन प्रातःकाल प्रजापति देवता के लिये दूध में [पु०२।खं०२सू०३०] में कहे अनुसार स्थालीपाक पका के उससे (प्रजापतयेस्वाहा) मन्त्र द्वारा प्रजापति के लिये तूष्णीं प्रधान होम करे ॥११॥ फिर शेष बचे घी में दही मिलाकर इस दही के साथ शेष बचे स्थालीपाक को (चक्रीवानडुहौ०) मन्त्र पढ़ के यजमान तीन वार खावे और शेष बचे को पत्नी विन मन्त्र तीनवार खावे॥१२॥फिर उसी दिन दोपहर बाद मानव कल्पसूत्र १।१।२ में लिखे अनुसार पिण्ड पितृयज्ञ करे ॥१३॥ विवाह विधि हो जाने पर स्त्री पुरुष दोनों एक वर्ष, बारह दिन, तीन दिन, वा एक दिन कम से कम ब्रह्मचारी रहें अर्थात् मैथुन न करें खार लवण छोड़ के हविष्यान्न खावें पृथक् २ पृथिवी पर सोवें ॥१४॥इसी अवसर में घर के काम काज धन के लेन देन आदिका अधिकार पत्नी को देदेवे ॥१५॥ ब्रह्मचर्य की समाप्ति में [पु०१।खं०११सू०६] से पत्नी के कटि में बांधी मेखला को खोलकर [यह ब्रह्मचारिणी रहने का चिह्न था इस को नि-

अपश्यंत्वामनसादीध्यानां स्वायांतनूंऋत्विये नाधमानाम् । उपमामुच्चायुवतिर्बभूयाः प्रजायस्वप्रजयापुत्रकामे ॥ प्रजापतिस्तन्वंमेजुषस्व त्वष्टादेवैःसहमानइन्द्रः । विश्वैर्देवैर्ऋतुभिःसंविदानः पुंसांबहूनांमातरौस्याव ॥ अहंगर्भमदधामोषधीष्वहंविश्वेषुभुवनेष्वन्तः । अहंप्रजाअजनयंपृथिव्या अहंजनिभ्योऽअपरीषुपुत्रान्॥इतिस्त्र्यादिव्यत्यासं जपति॥१६॥ करदिति भसदभिमृशति ॥ १७ ॥ जननीत्युपजननम् ॥१८॥ बृहदिति जातं प्रतिष्ठितम् ॥ १९ ॥ एतेन धर्मेण ऋतावृतौ संनिपातयेत् ॥ २० ॥ इति चतुर्दशः खण्डः समाप्तः ॥

तृतीये गर्भमासेअरणी आहृत्य षष्ठेऽष्टमे वा। जयप्रभृतिभिर्हुत्वा पश्चादग्नेर्दर्भेष्वासीनायाः (पत्न्याः) सर्वान्प्रमुच्य केशान्नवनीतेनाभ्यज्य त्रिश्येतया शलल्या शमीशा-

काल के] निम्नरीति से दोनों समागम करें समागम से पहिले (अपश्यंत्वात्प०) मन्त्र को पति को देखती हुई पत्नी पढ़े फिर (अपश्यंत्वामनसा०) मन्त्र को पत्नी की ओर देखता हुआ पति पढ़े फिर (प्रजापतिस्तन्वं०) मन्त्र को पत्नी पढ़े और (अहंगर्भमद०) मन्त्र को पति पढ़े॥१६॥फिर (करत्) ऐसा कह कर पुरुष पत्नी के उपस्थेन्द्रिय का स्पर्श करे (जननी) ऐसा कह कर अपने उपस्थेन्द्रिय का स्पर्शकरे (बृहत्)ऐसा कहकर दोनों के संयोगान्त में गर्भाशय का स्पर्शकरे ॥१७।१८। १९॥ इसी रीति से प्रत्येक ऋतुकाल में दोनों समागम कियाकरें ॥२०॥ यह चौदवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

भाषार्थः—गर्भ स्थिति से तीसरे छठे वा आठ वें महीने में अरणी द्वारा अग्निमन्थन कर स्थापन करके आघाराज्यभागों के बाद (१।११।२१) में कहा अनुमतिव्याहृति आदि पवित्र होमान्त करके (२।१०।८) के अनुसार अग्नि का प्रधान होम कर के जयाहोमादि करे अग्नि से पश्चिम में बिछाये दाभों पर बैठी पत्नी के शिर के सब केश खोलकर उन में मक्खन ल-

खया च सपलाशया पुनः पत्नीमग्निरदादिति सीमन्तं करोति ॥ १ ॥ इति पञ्चदशः खण्डः ॥

अष्टमे गर्भमासे जयप्रभृतिभिर्हुत्वा, फलैः स्नापयित्वा, या ओषधय इत्यनुवाकेनाहतेन वाससा प्रच्छाद्य गन्धपुष्पैरलङ्कृत्य फलानि कण्ठे वै संसृज्याऽग्निं प्रदक्षिणं कुर्यात् ॥ १ ॥ प्रजां मे नर्य पाहीति मन्त्रेणोपस्थानं कृत्वा गुणवतो ब्राह्मणान्भोजयेत् ॥ २ ॥ फलानि दक्षिणां दद्यात् ॥ ३ ॥ ततः स्वस्त्ययनं च ॥ ४ ॥ यो गुरुस्तमर्हयेत् ॥ ५ ॥ इति षोडशः खण्डः ॥

पुत्रे जाते वरं ददाति ॥१॥ अरणिभ्यामग्निं मथित्वा तस्मिन्नायुष्यहोमाञ्जुहोति ॥ २ ॥ अग्नेरायरसीत्यनुवाकेन

गाकर तीन जगह श्वेत सेही के कांटे को और पत्तों सहित शमी (छयोंकर) की डाली को एकत्र कर उससे (पुनः पत्नीमग्नि०) इत्यादि मन्त्र पढ़ मांग करे और पूर्ववत् वेनी बांधे ॥ १ ॥ यह पन्द्रहवां खण्ड समाप्त हुआ ।

गर्भ आठवें महिने का हो तब आघारादि सामान्य होमसहित जयाऽभ्यातानादि होम करके सब ओषधि फलादि से मिश्रित जलसे गर्भिणी को स्नान कराके(याओषधयः०) इस अनुवाक को पढ के चीरेदार नयी साड़ी उढ़ा के सुगन्धित केशरादि पुष्पमाला और मणिरत्न सुवर्णादि के आभूषणों से सुशोभित करे और फलों की माला बना के कण्ठ में पहनाके अग्नि की प्रदक्षिणा करावे ॥ १ ॥ (प्रजां मे नर्य०) मन्त्र से अग्नि का उपस्थान करके सदाचारी विद्वान् तीन आदि ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ २ ॥ दक्षिणा में फल देवे ॥ ३ ॥ पश्चात् स्वस्तिवाचन करावे ॥ ४ ॥ पुत्रोत्पन्न होने पर अपने गुरु का पूजन करे ॥ ५ ॥ यह सोलहवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

भाषार्थः–यदि पुत्र उत्पन्न हो तो उक्त अपने गुरु को धन दक्षिणा देवे ॥ १ ॥ अरणि के द्वारा अग्निमन्थन करके उस अग्नि में आयुष्य होम की (अग्नेरायु०) इत्यादि २१ प्रधान आहुति घी से करे । इस से पूर्व आघारादि तथा पीछे अनुमति आदि की आहुति देवे ॥ २ । ३ ॥ पवित्रादि होम के अ-

प्रत्यृचं प्रतिपर्य्यायमेकविंशतिमाज्याहुतीर्जुहोति ॥ ३ ॥ आज्यशेषे दधिमध्वपो हिरण्यशकलेनोपहृत्य त्रिःप्राशापयति ॥ ४ ॥ अश्माभव,परशुर्भव, हिरण्यमस्तृतंभव । वेदोवैपुत्र नामासि,सजीवशरदः शतम् ॥ इति प्रादेशेनाध्यधि प्रति मुखं प्रदक्षिणं सर्वतोऽभ्युद्दिशति ॥ ५ ॥ पलाशस्य मध्यमपर्णं प्रवेष्ट्य तेनास्य कर्णयोर्जपेत् । भूस्ते ददामीति दक्षिणे। भुवस्ते ददामीति सव्ये । स्वस्ते ददामीति दक्षिणे । भूर्भुवः स्वस्ते ददामीति सव्ये ॥ ६ ॥ इषं पिन्वोर्जं पिन्वेति स्तनौ प्रक्षाल्य प्रधापयेत् ॥ ७ ॥ इति सप्तदशः खण्डः ॥

दशम्यां रात्र्यां पुत्रस्य नाम दध्यात् । घोषवदाद्यन्तरन्तस्थं द्व्यक्षरं चतुरक्षरं वा । त्र्यक्षरं दान्तं कुमारीणाम् ॥१॥

न्त में शेष बचे घी में दही शहद और जल को सुवर्ण के टुकड़े से मिला के अनामिका अंगुली से तीन वार बच्चे को चटावे ॥ ४ ॥ (अश्मा भव०) इत्यादि मन्त्र के पांच भागों को पढ़ता हुआ मुख की ओर मुख के समीप २ प्रदक्षिणक्रम से प्रादेश द्वारा संकेत करे ॥ ५ ॥ ढांक के पत्तों में से बीच के पत्ते को लपेटकर उस का एक छोर बच्चे के कान में एक अपने मुख में लगा के निम्न मन्त्र पढ़े (भूस्ते द०) दहिने (भुवस्ते०) बायें में (स्वस्ते०) दहिने में फिर (भूर्भुवः स्वस्ते०) बायें कान में जपे ॥ ६ ॥ फिर (इषंपिन्वो०) मन्त्र पढ़ के पत्नी के दोनों स्तनों (कुचों) को धोकर बच्चे को पिलावे ॥ ७ ॥ यह सत्रहवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

भाषार्थः—जात कर्म से लेकर दशवें दिन पुत्र का नाम धरे । कोई आचार्य दशमी रात्री व्यतीत होने पर ग्यारहवें दिन नाम रखना मानते हैं । वर्गों के तीसरे चौथे घोषवत् अक्षर जिस के आदि में यरलव अन्तस्थ अक्षर जिस के बीच में हों ऐसे दो वा चार अक्षर का नाम पुत्र का और तीन अक्षर का दकारान्त नाम कन्याओं का रक्खे ॥ १ ॥ उसी नाम से अभिवादन गुरु आदि

तेनाभिवादयितुं, त्यक्त्वा पितुर्नामधेयं, यशस्यं नामधेयं देवताश्रयं नक्षत्राश्रयं, देवतायाश्च प्रत्यक्षं प्रतिषिद्धम् ॥२॥ स्नात्वा सहपुत्रोऽभ्युपैति ॥३॥ अथैनमभिमृशति–अग्नेष्ट्वा तेजसा सूर्यस्य वर्चसा विश्वेषां त्वा देवानां क्रतुनाभिमृशामीति प्रक्षालितपाणिर्नवनीतेनाभ्यज्याग्नौ प्रताप्य, ब्राह्मणाय प्रोच्याभिमृशेदिति श्रुतिः ॥ ४ ॥ वरं कर्त्रे ददाति ॥ ५ ॥ अङ्गादङ्गात्सम्भवसि हृदयादधिजायसे । आत्मा वै पुत्रनामासि सजीव शरदः शतम् ॥ इति प्रवासादेत्य पुत्रस्य मूर्द्धनि जपेत् ॥ ६ ॥ न मधुमांसे प्राश्नीयादापशुबन्धात् ॥ ७ ॥ संवत्सरे चाजाविभ्यामग्निधन्वन्तरी यजेत् ॥८॥ इत्यष्टादशः खण्डः॥

अथादित्यदर्शनम् ॥ १ ॥ चतुर्थे मासि पयसि स्थाली

को किया करे। पुत्र के नाम के साथ ही पीछे पिता का भी नाम लगाया जाय पर अभिवादन में पिता के नाम को छोड़ देवे। जिस तिथि वा नक्षत्र में जन्म हो उस के देवता सम्बन्धी वा नक्षत्र सम्बन्धी नाम कीर्त्ति के लिये अच्छे हैं। परन्तु देवता और पिता का साक्षात् नाम रखना मना है ॥ २ ॥ फिर पुत्र के सहित अपने पिता को अभिवादन करके अग्नि के सम्मुख बैठे ॥३॥ फिर धोये हुए हाथों में मक्खन लगा के अग्नि में तपा के और बच्चे का स्पर्श करने को ब्राह्मण से आज्ञा लेकर (अग्नेष्ट्वा०) मन्त्र पढ़के बच्चे का स्पर्श करे ॥४॥ जातकर्मादि कराने वाले आचार्य को दक्षिणा देवे ॥ ५ ॥ जब देशान्तर से आवे तब (अङ्गाद०) मन्त्र को पुत्र के शिर में मुख लगा के जपै ॥ ६ ॥ पशुबन्ध यज्ञ करने से पहिले शहद और मांस न खावे (उससे आगे भी खाने का विधि नहीं किन्तु पहिले न खाने का निषेध है) ॥ ७ ॥ पुत्र जन्म से लेकर एक वर्ष में बकरी और भेड़ के द्वारा अग्नि और धन्वन्तरि देवता का पूजन करे ॥ ८ ॥

यह अठारहवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

अब इस उन्नीसवें खण्ड में विधि सहित सूर्य का दर्शन करना रूप निष्क्रमण संस्कार कहते हैं ॥ १॥ बालक चौथे महीने में हो तब दूध में स्थालीपाक

पाकं श्रपयित्वा तस्य जुहोति ॥ २॥ आदित्यः शुक्रउदगा-त्पुरस्तात्, हंसः शुचिषत्, यदेदेनमिति सूर्यस्य जुहोति ॥३॥ उदुत्यंजातवेदसमित्येतयोपस्थायादित्यस्याभिमुखं दर्शयेत् । नमस्ते अस्तुभगवन् शतरश्मे तमोनुद । जहिमेदेवदौर्भाग्यं सौभाग्येनमांसंयोजयस्व ॥ इति ॥ ४ ॥ अथ ब्राह्मणतर्पणम् ॥५॥ ऋषभो दक्षिणा॥६॥ इत्यूनविंशः खण्डः समाप्तः॥

अथान्नप्राशनम् ॥१॥ पञ्चमे षष्ठे वा मासि पयसि स्थालीपाकं श्रपयित्वा, स्नातमलङ्कृतमहतेन वाससा प्रच्छाद्याऽन्नपतेऽन्नस्यनोदेहीति हुत्वा, हिरण्येन प्राशयेद्-न्नात्परिस्रुतइत्यृचा ॥ २ ॥ [रत्नसुवर्णोपस्करा॒ण्यायुधानि दर्शयेत् ॥ ३ ॥ यदिच्छेत्तदुपसंगृह्णीयात् ॥ ४ ॥ ततो ब्रा-

---

बना कर उस का निम्न रीति से होम करे ॥२॥ तूष्णीं अग्नि का स्थापन स्थापन प्रज्वालन करके इसी अग्नि में दूध का स्थालीपाक बनाकर (आदित्यः० । हंसः शुचि० । यदेदेन०) इन तीन स्वाहान्त मन्त्रों से सूर्य देवता का होम आघारादि के पश्चात् करे ॥ ३ ॥ (उदुत्यं० मन्त्र से सूर्य का उपस्थान करके (नमस्तेऽस्तु०) इत्यादि मन्त्र पढ़ के बच्चे को आदित्य की ओर मुख कर दर्शन करावे ॥ ४ ॥ इस के अनन्तर ब्राह्मण को भोजन करावे ॥ ५ ॥ और एक बैल दक्षिणा में देवे ॥ ६ ॥ यह उन्नीशवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

अब इस बीशवें खण्ड में अन्नप्राशन कहते हैं ॥ १ ॥ पांचवें व छठे महिने में दूध में स्थालीपाक बनाके [यदि हृष्ट पुष्ट बालक हो तो पांचवें महिने में अन्यथा छठे में करे] सर्वौषधी आदि युक्त जल से बालक को स्नान कराके और आभूषण पहनाके नया चीरेदार वस्त्र उढ़ा कर आघारादि के पश्चात् (अन्नपते०) मन्त्र से प्रधान होम स्थालीपाक से करके (अन्नात्परिस्रुत०) इस ऋचा को पढ़ कर सुवर्ण से बालक को स्थालीपाक खवावे ॥२॥ [रत्न और सुवर्ण जिन में लगा हो ऐसे हथियार बच्चे को दिखावे ॥३॥ जिस आयुध को आगे धारण कराना चाहता हो उस को बालक से स्पर्श करावे ॥४॥ इस के

ह्मणभोजनम् ॥५॥ वासो दक्षिणा ॥६॥] इति विंशः खण्डः॥

तृतीयस्य वर्षस्य भूयिष्ठे गते चूडाः कारयेत् । उदगयने ज्यौत्स्ने पुण्ये नक्षत्रेऽनयत्र नवम्याः ॥१॥ जयप्रभृतिभिर्हुत्वा–उष्णेनवायुरुदकेनेद्यजमानस्यायुषा । सविताव-रुणोदधद्यजमानायदाशुषे ॥इत्युष्णा अपोऽभिमन्त्रयते ॥२॥ अदितिःकेशान्वपत्वापउन्दन्तुजीवसे । धारयतुप्रजापतिः पुनःपुनःस्वस्तये ॥ इत्यभ्युन्दन्ति ॥ ३ ॥ ओषधेत्रायस्वैनमिति दक्षिणस्मिन्केशान्ते दर्भमन्तर्दधाति ॥ ४ ॥ स्वधितेमैनंहिंसीरिति क्षुरेणाभिनिदधाति ॥ ५ ॥ येनावपत्सविताक्षुरेण सोमस्यराज्ञोवरुणस्यकेशान् । तेनब्राह्मणोवपत्वा युष्मानयं जरदष्टिरस्तु ॥ येनपूषावृहस्पतेरिन्द्रस्यचायुषेऽवपत् । तेनतेवपाम्यायुषेदीर्घायुत्वायजीवसे । येनभूश्चरत्ययं ज्योक्चपश्यतिसूर्यः । तेनतेवपाम्यायुषे सुश्लोक्या यस्वस्तये ॥ इति तिसृभिस्त्रिः प्रवपति ॥ ६ ॥ यत्क्षुरेण

बाद ब्राह्मणों को भोजन कराके दक्षिणा में वस्त्र देवे ॥५। ६॥] यह बीशवां खण्ड पूरा हुआ ॥

अब चूडाकर्म मुण्डन संस्कार दिखाते हैं। बालक के आयु का तीसरे वर्ष में अधिक भाग बीत जाने पर जब उत्तरायण शुक्ल पक्ष हो वा पुण्य नक्षत्र हो तब नवमी तिथि को छोड़ कर मुंडन करावे ॥ १ ॥ फिर आघाराज्यभागादि के बाद जयादिहोम करके (उष्णेनवायु०) मन्त्र पढ़ के गर्म जल का अभिमन्त्रण करे ॥२॥ फिर (अदितिः केशान्०) मन्त्र पढ़ के गर्म जल से बच्चेके बालों को भिगोवे ॥३॥ (ओषधेत्रा०) मन्त्र पढ़ के शिर के दहिने बालों के अन्त में बालों के बीच दाभ रक्खे ॥ ४ ॥ (स्वधितेमैनं०) मन्त्र पढ़ के दाभ सहित बालों पर छुरा रक्खे ॥५॥ फिर (येनावपत०) इत्यादि तीन मन्त्र पढ़ २ के तीन वार कुश सहित बालों को काटे ॥ ६ ॥ फिर (यत्क्षुरेण०) मन्त्र पढ़ के

वर्त्तयतासुतेजसा वप्तर्वपसिकेशान् । शुन्धिशिरोमास्यायुः प्रमोषीः ॥ इति लौहायसं क्षुरं केशवापाय प्रयच्छति ॥७॥ मातेकेशाननुगाद्वर्चएतत्तथाधातादधातुते । तुभ्यमिन्द्रोवरुणोबृहस्पतिः सवितावर्चआदधुः ॥ इतिप्रवपतोऽनुमन्त्रयते ८ सुहृत्परिग्राहं हरितगोशकृत्पिण्डे समवचिनोति ॥ ९ ॥ उप्त्वायकेशान्वरुणस्यराज्ञो बृहस्पतिः सविता विष्णुरग्निः । तेभ्यो निधानं महतं न विन्दन्नन्तरा द्यावापृथिव्योरपस्युः ॥ इति प्रागुदीचो ह्रियमाणाननुमन्त्रयते ॥ १० ॥ अरिक्तेपतया श्लेषयेदिति श्रुतिः ॥११॥ वरं कर्त्रे ददाति। पक्ष्मगुडं तिलपिश्लं च केशवापाय ॥ १२ ॥ एतेन तु कल्पेन षोडशे वर्षे गोदानम् । अग्निं वाध्येष्यमाणस्याग्निगोदानिको मैत्रायणिरिति श्रुतिः ॥ १३ ॥ अदितिः श्मश्रु वपत्वि-

लोहे के छुरे को हजामत करने वाले नाई को देदेवे ॥७॥ फिर (मातेकेशान्०) मन्त्र पढ़ता हुआ बाल बनाते नाई का अनुमन्त्रण करे (उसकी ओर देखे)॥८॥ नाई के बनाने से गिरते हुए बालों को सुहृद्भाव से ले २ कर गौ के हरे गोबर के पिण्ड पर धरता जावे ॥ ९ ॥ फिर (उप्त्वायकेशान्०) मन्त्र से पूर्व वा उत्तर को गोबरपिण्ड सहित ले जाते हुए केशों का अनुमन्त्रण करे ॥ १० ॥ उस बालों सहित गोबर के पिण्ड को धान्य जिन में भरा हो ऐसे पत्तों के हाथों से स्पर्श करावे ऐसा श्रुति में लिखा है ॥ ११ ॥ कर्म कराने वाले पुरोहित को गौ दक्षिणा में देवे । केशर गुड़ और कुटे हुए तिल नाई को देवे ॥ १२ ॥ इसी रीति से जन्म से सोलहवें वर्ष गोदान नाम केशान्त संस्कार करे अथवा वेदाध्ययन करता हुआ जब आवसथ्याग्नि का स्थापन विधिपूर्वक करे तब पहिले वा पीछे केशान्त संस्कार करे । क्योंकि श्रुति में लिखा है कि (अग्निगोदानिको मैत्रायणिः) अर्थात् महर्षि मैत्रायणि ने अग्निस्थापन के समय गोदान (केशान्त) संस्कार किया था ॥ १३ ॥ इसी खण्ड में मन्त्रों में आये (केशान्) के स्थान में केशान्त संस्कार में मन्त्र बोलते समय श्मश्रु-

त्यूहेन श्मश्रु प्रवपति शुन्धिमुखमिति च ॥ १४ ॥ इत्येकविंशः खण्डः समाप्तः ॥

सप्तमे नवमे वोपायनम् ॥१॥ आगन्त्रासमगन्महि प्रथमर्तिंयुयोतुनः । अरिष्टाःसंचरेमहि स्वस्तिचरतादिशः ! स्वस्त्यागृहेभ्यः ॥ इत्युप्तकेशेन स्नातेनाक्तेनाभ्यक्तेनालङ्कृतेन यज्ञोपवीतिना समेत्य जपति ॥ २ ॥ अथास्मै वासः प्रयच्छति—या अकृन्तन्यावतन्वन्या आवन्या अवाहरन् । याश्चग्नादेव्योऽन्तानभितोऽततनन्त । तास्त्वा देव्योजरसेसंव्ययन्त्वायुष्मान्निदंपरिधत्स्ववासः ॥ इत्यहतं वासः परिधाप्यान्वारभ्याघारावाज्यभागौ हुत्वाऽऽज्यशेषे दध्यानीय–दधिक्राव्णोअकारिषमिति दधि त्रिःप्राश्नाति ॥ ३ ॥ कोनामासीत्याह ॥ ४ ॥ नामधेये प्रोक्ते–

पद का और शिरः शब्द के स्थान में (मुखम्) का ऊह करना चाहिये ॥१४॥ यह इक्कीशवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

भावार्थः–सातवें वा नवमें वर्ष में ब्राह्मणादि द्विज बालकों का उपनयन संस्कार करना चाहिये ॥ १ ॥ प्रथम पितादि घर के लोग बालक का क्षौर करा के स्नान करावें फिर आंखों में अञ्जन शिर आदि में मक्खन लगाके अंगूठी आदि आभूषण तथा बनाया हुआ यज्ञोपवीत पहनावें तब ऐसे बालक के समीप जाकर आचार्य (आगन्त्रासमग०) मन्त्र का जप करे ॥ २ ॥ फिर (या अकृन्तन्या०) इत्यादि मन्त्र पढ़ के चीरेदार नया वस्त्र बालक को (परिधत्स्व०) ऐसा कहके पहनावे । फिर बालक के अन्वारम्भ करने पर आघार तथा आज्यभाग होम करके होम के शेषघृत में से किंचित् पृथक् लेकर उस में दही मिलाकर (दधिक्राव्णो०) मन्त्र द्वारा तीन वार बालक को प्राशन करावे ॥३॥ फिर आचमन कर लेने पर आचार्य कहे (कोनामासि) तुम्हारा क्या नाम है ॥ ४ ॥ तब बालक अपना शर्मान्तादि नाम (अमुकशर्मा-

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्यां हस्तं गृह्णाम्यसाविति हस्तं गृह्णन्नाम गृह्णाति । प्राङ्मुखस्य प्रत्यङ्मुख ऊर्ध्वस्तिष्ठन्नासीनस्य दक्षिणमुत्तानं दक्षिणेन नीचारिक्तमरिक्तेन—सविता ते हस्तमग्रहीदसावग्निराचार्यस्तव देव सवितरेष ते ब्रह्मचारी तं गोपाय स मा मृतत्॥ कस्य ब्रह्मचार्यसि । प्राणस्य ब्रह्मचार्यसि । कस्त्वा कमुपनयते । काय त्वा परिददामि । कस्मै त्वा परिददामि । भगाय त्वा परिददाम्यर्यम्णे त्वा परिददामि । सवित्रे त्वा परिददामि । सरस्वत्यै त्वा परिददामि । इन्द्राग्निभ्यां त्वा परिददामि । विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यः परिददामि । सर्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यः परिददामीति परिददाति ॥ ५ ॥ ब्रह्मणो ग्रन्थिरसि स ते माविस्रसदिति हृदयदेशमारभ्य जपति । प्राणानां ग्रन्थिरसीति प्राणदेशम् ॥६॥ ऋतस्य गोप्त्री तपसस्तरुत्री घ्नती

हृतस्मि भोः) कहे तब आचार्य (देवस्यत्वा०) इत्यादि मन्त्र पढ़ता हुआ बालक का दहिना हाथ पकड़े और (असौ) पद के स्थान में बालक का सम्बोधनान्त नाम बोले । सो बालक के हाथ पकड़ने की रीति यह है कि शिष्य का मुख पूर्व को आचार्य का पश्चिम को हो शिष्य बैठा हो आचार्य खड़ा हो शिष्य का हाथ नीचा और खाली हो ऐसे शिष्य के दहिने हाथ को किसी मंगल बोधक वस्तु सहित अपने दहिने हाथ से आचार्य पकड़े और (सवितात्े०) इत्यादि मन्त्र पढ़े (कस्य ब्रह्म०) इत्यादि मन्त्रों में प्रजापति आदि उन २ देवताओं का ध्यान करता हुआ रक्षा के लिये ब्रह्मचारी को देवताओं को सौंपे ॥५॥ अपना दहिना हाथ ब्रह्मचारी के हृदय पर रख के (ब्रह्मणोग्रन्थि०) मन्त्र पढ़े तथा ब्रह्मचारी की नासिका के छिद्रों का स्पर्श करता हुआ (प्राणानां०) मन्त्र को आचार्य पढ़े ॥ ६ ॥ फिर ब्रह्मचारी (ऋतस्यगो०) इत्यादि मन्त्र को पढ़ता हुआ सात

रक्षः सहमाना अरातीः । सा नः समन्तमभिपर्येहि भद्रे धर्त्तारस्ते सुभगे मेखले मारिषाम ॥ इति मौञ्जीं पृथ्वीं त्रिगुणां मेखलामादत्ते ॥ ७ ॥ युवासुवासाइति मेखलां प्रदक्षिणंत्रिःपरिव्ययति॥८॥पुंसस्त्रीन्ग्रन्थीन्बध्नाति॥९॥ इयंदुरुक्तात्परिबाधमाना वर्णंपुराणंपुनतीमआगात् । प्राणापानाभ्यांबलमाभजन्ती शिवादेवीसुभगेमेखलेमारिषाम॥ इति तस्यांपरिवीतायां जपति।ममव्रतेतेहृदयं दधातुममचित्तमनुचित्तन्तेअस्तु । ममवाचमेकव्रतोजुषस्व बृहस्पतिष्ट्वानियुनक्तुमह्यम् ॥इति॥१०॥यज्ञियस्यवृक्षस्यदण्डंप्रदाय कृष्णाजिनं चादित्यमुपस्थापयति। अध्वनामध्वपते श्रेष्ठस्यस्वस्त्यस्याध्वनःपारमशीय। तच्चक्षुर्देवहितंपुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्।पश्येमशरदःशतं जीवेमशरदःशतम् । शृणुयामशरदःशतं प्रब्रवामशरदःशतम् । अदीनाः स्याम शरदःशतं भूयश्चशरदःशतात् ॥ यामेधाऽप्सरःसु गन्धर्वेषु च यन्मनः । दैवीयामानुषी मेधा सा मामाविशतादिहैव ॥ इति ॥११॥ अभिदक्षिणमानीयाऽग्नेः

कोथों की तीन लड़ों वाली मोटी मेखला को हाथ में लेवे ॥ ७ ॥ फिर (युवासु०) मन्त्र पढ़ के उस मेखला को प्रदक्षिणक्रम से तीन वार अपने कटि भाग में लपेटे ॥ ८ ॥ पुरुष की मेखला में तीन गांठें लगावे वा वे तीन गांठें पुरुष चिह्नवाली हों स्त्रीसम्बन्धी न हों स्त्री की मेखला पूर्व विवाह में कह चुके हैं उस की गांठ अन्य प्रकार की होगी ॥९॥ मेखला धारण करलेने पर ब्रह्मचारी (इयं दुरुक्तात्०) मन्त्र पढ़े और (ममव्रते०) मन्त्र को आचार्य पढ़े ॥ १० ॥ फिर बिल्व-बेल, पलाश-ढाक, आदि यज्ञिय वृक्ष का दण्ड और कृष्णमृग का चर्म ब्रह्मचारी को दे कर (अध्वनाम०) इत्यादि मन्त्रों को पढ़ता हुआ आचार्य ब्रह्मचारी से आदित्य देवता का उपस्थान करावे ॥ ११ ॥ अपने से दक्षिण अग्नि से पश्चिम में ब्रह्मचारी को खड़ा कर एक पत्थर की शिलापर ब्रह्मचारी का दहिना पग धरावे और साथ ही आचार्य (एह्यश्मानं०)

पश्चात्-एह्यश्मानमातिष्ठाश्मेव त्वं स्थिरो भव। कृण्वन्तु वि-श्वेदेवा आयुष्टे शरदःशतम् ॥इति दक्षिणेन पादेनाश्मान-मास्थापयति॥१२॥पश्चादग्नेर्महदुपस्तीर्य सूपस्थलं कृत्वा प्रा-ङासीनः प्रत्यङ्ङासीनायानुवाचयति गायत्रीं सावित्रीमपिह्ये के त्रिष्टुभमपिह्येके जगतीमोमित्युक्त्वा व्याहृतिभिश्च ॥१३॥तां त्रिरवगृह्णीयात्तां द्विरवकृत्य तां सकृत्समस्येत् । पा-दशोऽर्द्धर्चशः सर्वामन्तेन ॥१४॥ यत्तिसृणां प्रातरन्वाह यद्-द्वयोर्यदेकस्याः संवत्सरे द्वादशाहे षडहे त्र्यहे वा तस्मात्सद्यो ऽनूच्येति श्रुतिः ॥१५॥ वरं कर्त्रे ददाति कांस्यं वसनं च ॥१६॥ यस्य तु मेधाकामः स्यात्पलाशं नवनीतेनाभ्यज्य तस्य छाया यांवाचयेत्-सुश्रवःसुश्रवाअसि । यथात्वं सुश्रवःसुश्रवाअसि

मन्त्र पढ़े ॥१२॥ इस के अनन्तर स्थापित अग्नि से पश्चिम में आचार्य के बैठने को ऊंची गद्दी लगा के पूर्व को मुख कर उच्चासन पर आचार्य बैठे उस के सामने पश्चिमाभिमुख नीचे आसनपर बैठे ब्रह्मचारी को प्रणव तथा व्याहृतियों सहित सविता देवता वाली (तत्सवितु०) इस गायत्री मन्त्र का तीनों वर्णों के ब्रह्मचारियोंको आचार्य उपदेश करे यह किन्हीं आचार्यों का मत है। और कोई कहते हैं कि पूर्व (पु०१खं०२सू०३) के लेखानुसार (आदेवो०)इस त्रिष्टुभ् सावित्री का क्षत्रिय को और (युञ्जते०) जगती सावित्री का वैश्य ब्रह्मचारी को उपदेश करे ॥१३॥ उस गायत्रीके तीन भाग कर के उपदेश करे । दोवार खण्ड २ करके तथा एक वार पूरे इकट्ठे मन्त्र का करे। प्रथम वार तीनों पाद पृथक् २ द्वितीय वार (धीमहि) तक एकभाग आगे दूसरा तृतीय वार में सब मन्त्र एक वार में कहलावे ॥१४॥गायत्री सावत्री के उपदेशार्थ एक, दो, तीन ,छः और बारह रात्री व्यतीत होने पर उपदेश करे इन विकल्पित पांच पक्षों में जिस दिन करे उस दिन प्रातःकालही करे परन्तु उपनयन संस्कारके समय तत्कालही उपदेश करना श्रुतिके अनुकूल उत्तम पक्ष है॥१५॥उपनयन कराने वाले पुरोहितादि को धन वा गौ कांसे का पात्र और नया वस्त्र दक्षिणा में देवे ॥१६॥ आचार्य जिस ब्रह्मचारी का बुद्धिमान् होना चाहता हो उस को मक्खन जिस में लगाया गया

एवं मां सुश्रवः सौश्रवसं कुरु ॥ यथा त्वं देवानां वेदानां निधिपो असि । एवमहं मनुष्याणां वेदानां निधिपो भूयासम् ॥ इति अधीतेहवा अयमेषां वेदानामेकं द्वौ त्रीन्सर्वान्वेति यमेवंविद्वांसमुपनयतीति श्रुतिः ॥१८॥ व्याख्यातं ब्रह्मचर्यम् ॥१९॥ अथ भैक्षं चरते मातरमेवाग्रे याश्चान्याः सुहृदो यावत्यो वा संनिहिताः स्युः ॥२०॥ आचार्याय भैक्षमुपकल्पयते । तेनानुज्ञातो भुञ्जीतेति श्रुति ॥२१॥ इति द्वाविंशः खण्डः ॥

अथ दीक्षा चातुर्होत्रिकी संवत्सरम् ॥१॥ चतुर्होतॄन्स्वकर्मणो जुहुयात् । सह षड्ढोत्रा सप्तहोतारम् ॥२ ॥ अन्ततो

हो ऐसे ढांक वृक्ष की छाया में (सुश्रवः०) इत्यादि मन्त्र कहलावे ॥१७॥ श्रुति में लिखा है कि उपनयन विधि को यथार्थ ठीक जानने वाला आचार्य जिस शिष्य का ठीक २ उपनयन करता है वह एक दो तीन वा सब वेदों को (मनु० अ०३।२) अवश्य पढ़ता है ॥१७॥ (पु०१।खं०१।२) में ब्रह्मचर्य का व्याख्यान कर चुके ॥१९॥ अब भिक्षा मांगने का विचार दिखाते हैं । ब्रह्मचारी प्रथम माता से ही भिक्षा मांगे (मनु०अ०२।५०) माता के अभाव में प्रेम रखने वाली मौसी आदि जो २ समीप हों उन २ से मांगे ॥२०॥ भिक्षा मांग कर प्रथम आचार्य को समर्पण करे और जब गुरु आज्ञा देवें तब भोजन करे ॥ २१ ॥

यह बाईशवां खण्ड पूरा हुआ ॥

चातुर्होत्रिकी दीक्षा यह कर्मका नाम है । ब्रह्मचारीके लिये जो नियम इस ग्रन्थ के आदि में कहे हैं वे अधिकांश दीक्षितके नियमों से मिलते हैं । यद्यपि श्रौतसूत्रों में दीक्षित के लिये पूरे २ नियम कहे गये हैं तथापि इसी खण्ड के ८ वें सूत्र से लेके कुछ नियम यहां भी कहे हैं । इस चातुर्होत्रिकी दीक्षा को ब्रह्मचारी एक वर्ष तक करे ॥ १ ॥ वाचस्पति आदि देवों की चतुर्होतादि संज्ञा हैं । ब्रह्मचारी अपना कर्म करता हुआ वाचस्पति आदि चार होताओं के लिये दीक्षा के दिनों में आहुति दिया करे । और वाक् आदि छः होताओं के साथ सप्तहोतृक होम करे ॥ २ ॥ अन्त में ब्राह्मणादि दीक्षित को दुग्धादि भोजनार्थ

व्रतं प्रदायादितो द्वावनुवाकावनुवाचयेत् ॥३॥ एवमेवोद्दीक्षां जुहुयात् ॥ ४ ॥ अथ दीक्षाग्निकी द्वादशरात्रम् ॥५॥ युञ्जानः प्रथमंमनइत्यष्टौ हुत्वाऽऽकूतमग्निं प्रयुजं स्वाहेति षड् जुहोति । विश्वो देवस्य नेतुरिति सप्तमीम् ॥६॥ व्रतं प्रदायादितोऽष्टावनुवाकाननुवाचयेत् ॥ ७ ॥ त्रिषवणमुदकमाहरेत् त्रींस्त्रीन्कुम्भान् ॥ ८ ॥ एकेन वाससाऽनन्तर्हितायां भूमौ शयीत भस्मनि करीषे सिकतासु वा ॥ ९ ॥ नोदकमभ्यवेयात् ॥ १० ॥ समाप्ते घृतवताऽपूपेनेष्ट्वा वात्सप्रं वाचयेत् ॥ ११ ॥ ततो घृतवद्भिरपूपैर्ब्राह्मणान्भोजयेत् ॥ १२ ॥ एवमेवोद्दीक्षां जुहुयात् ॥ १३॥ अथ दीक्षाश्वमेधिकी द्वाद-

नियत वस्तु देकर वेद के आरम्भ के दो अनुवाकों का अनुवाचन करावे ॥ ३ ॥ इसी प्रकार उद्दीक्षा का भी होम करे ॥ ४ ॥ अब आग्निकी दीक्षा का व्रत बारह दिन का होता है सो भी दिखाते हैं ॥ ५ ॥ प्रथम आघार और आज्यभागों के पश्चात् (युञ्जानः प्र०) इत्यादि आठ आहुति करके (आकूतमग्निं प्र०) इत्यादि छः आहुति करे पीछे (विश्वोदेवस्य०) मन्त्रसे सातवीं आहुति करे ॥ ६॥ फिर भोजनार्थ दुग्धादि देकर अग्निकाण्ड के आदि से आठ अनुवाकों का अनुवाचन करावे । ब्रह्मचारी ऐसा नित्य २ बारहों दिन करे ॥७॥ और कुछ विशेष नियम ये हैं कि सायं प्रातः और मध्याह्न में तीनों समय तीन २ घड़ा भर २ जलाशयसे जल लाया करे ॥८॥ जिस पर कुछ पलाल आदि भी न बिछा हो ऐसी शून्य भूमि पर अथवा भस्म बिछी हो वा कण्डों का चूरा बिछा हो अथवा बालू बिछायी हो उस पर एक वस्त्र केवल लंगोटी वा धोती पहन कर सोया करे ॥ ९ ॥ दीक्षा के दिनों में जल में घुस कर स्नान न करे और अन्य प्रकार से भी स्नान न करे ॥ १० ॥ बारह दिन का व्रत समाप्त होने पर मालपुआ द्वारा प्रधान देवता अग्नि के लिये होम करके वत्सप्री देवता वाले अनुवाक का जप करे ॥ ११ ॥ तदनन्तर मालपुआ द्वारा तीन ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ १२ ॥ इसी प्रकार उद्दीक्षा का भी होमकरे ॥ १३ ॥ अब बारह दिन का आश्वमेधिकी दीक्षा का व्रत

शरात्रम् ॥ १४ ॥ वैतसमिध्ममुपसमाधाय नवमेनानुवाकेन हुत्वा षष्ठेनोपस्थाप्य व्रतं प्रदायादित एकविंशत्यनुवाका-ननुवाचयेत् ॥ १५॥ त्रिषवणमश्वस्य घासमाहरेत् । त्रींस्त्री-न्पूलान् ॥ १६ ॥ एकेन वाससाऽनन्तर्हितायां भूमौ शयीत भस्मनि करीषे सिकतासु वा ॥१७॥ या ओषधयः। समन्या यन्ति । पुनन्तु मा पितरः । अग्नेर्मन्वइति चतुर्भिरनुवा कैरपोऽभिमन्त्र्य स्नानमाचरेत् ॥१८॥ एवमेवोद्दीक्षां जुहु-यात् ॥ १९ ॥ शादंदद्भिरिति चतुर्दशानुवाकाननुवाचयेत् ॥ ॥ २० ॥ रहस्यमध्येष्यमाणः प्रवर्ग्यम् ॥ २१ ॥ आदेशी यथा

कहते हैं। जैसे आग्निकी दीक्षा ब्राह्मण ब्रह्मचारी के लिये ही नियत है वैसे ही यह आश्वमेधिकी दीक्षा क्षत्रिय ब्रह्मचारी के लिये ही है अन्य के लिये नहीं हैं ॥१४ ॥ वेंतनामक वृक्ष की समिधाओं से अग्नि को प्रज्वलित करके नववें अनुवा-क से होम और छठे अनुवाक से देवता का उपस्थान करे। तदनन्तर भोजनार्थ नियत यवागू दीक्षित को यथायोग्य देकर आदि से इक्कीश अनुवाकों का अनुवाचन करे ॥ १५ ॥ सायं प्रातः और मध्याह्न तीनों काल में तीन २ पूला घास घोड़े के लिये लावे। अर्थात् इस आश्वमेधिकी दीक्षा से क्षत्रिय ब्रह्मचा-री अच्छे प्रकार देवबुद्धि से घोड़े की सेवा भी अन्य अपने नियम पालने के तुल्य किया करे ॥ १६ ॥ जिस पर कुछ न बिछा हो ऐसी खाली भूमि पर वा भस्म बिछा कर वा कंडों का चूरा बिछा के अथवा वालू बिछा के उस पर एक वस्त्र धारण किये सोया करे ॥ १७ ॥ (या ओषधयः०) इत्यादि चार अनुवाकों से जल का अभिमन्त्रण कर के नित्य २ स्नान किया करे ॥ १८ ॥ इसी प्रकार उद्दीक्षा का भी होम करे ॥ १९ ॥ (शादंदद्भिः०)इत्यादि चौदह अनुवाकों का अनुवाचन करावे ॥ २० ॥ रहस्य नाम वेद के उपनिषद् भाग को पढ़ना चाह-ता हो तो मानव श्रौत सूत्रादि में लिखे अनुसार ब्रह्मचारी प्रवर्ग्य संभरण क-र्म के प्रतिपादक मन्त्र ब्राह्मण का प्रथम अध्ययन करे ॥ २१ ॥ यदि दीक्षा ले

पुरस्ताद् व्याख्यातम् ॥ २२ ॥ आदितः पञ्चविंशत्यनुवाकाननुवाचयेत् ॥ २३ ॥ त्रैविद्यकमुपनयनेन व्याख्यातम् ॥ २४ ॥ आदितस्त्रीननुवाकाननुवाचयेत् ॥ २५ ॥ व्याख्यातानि व्रतानि व्याख्यातानि व्रतानि ॥ २६ ॥ उदुत्तमं वरुणपाशमिति मेखलामुन्मुञ्चति ॥ २७ ॥ इति मैत्रायणीयमानवगृह्ये त्रयोविंशः खण्डः प्रथमः पुरुषश्च समाप्तः ॥

कर वेदान्त पढ़ना चाहता हो तो पु० १ खं० २१ में लिखे चूड़ाकर्म विधि के अनुसार क्षौर करावे पढ़े ॥ २३ ॥ उपनयन संस्कार प्रायः साङ्ग एक वेद के पढ़ने को होता है क्योंकि साङ्गोपाङ्ग सब वेदों का पढ़ लेना काल और श्रम अधिक लगने से सब का काम नहीं है। और यदि तीनों वेद पढ़ने के व्रत का कोई संकल्प करे तो उस का भी उपनयन के तुल्य व्याख्यान जानो ॥ २४ ॥ फिर इस त्रैवेदिक व्रत में आदि से लेकर तीन अनुवाकों का अनुवाचन करे ॥ २५ ॥ इस प्रकरण में मानवगृह्य सूत्र का अभिप्राय यह है कि चातुर्होत्रिकी दीक्षा में उन दिव्य होताओं का होमादि द्वारा पूजन तथा चार, छः और सात होताओं से होने वाले सप्तहौत्रादि विषयक मन्त्र ब्राह्मण और कल्प ग्रन्थों का विशेष कर उस दीक्षा के समय अध्ययन करे। तथा आग्निकी दीक्षा में अग्निदेव सम्बन्धी मन्त्र ब्राह्मण कल्पों को पढ़े और आश्वमेधिकी दीक्षा में क्षत्रिय ब्रह्मचारी अश्वमेध सम्बन्धी मन्त्र ब्राह्मण कल्पों को पढ़े। ब्रह्मचारी के व्रतों का व्याख्यान ग्रन्थ के आरम्भ में और इसी कण्डिका के नवमादि सूत्रों में कर चुके हैं ॥ २६ ॥ (उदुत्तमं०) मन्त्र पढ़ के ब्रह्मचारी मेखला उतारे ॥ २७ ॥ (अनुमान होता है कि पूर्वार्द्ध समाप्ति का चिह्न २६ वें सूत्र में है इस कारण यह सत्ताईशवां सूत्र समावर्त्तन संस्कार में होना चाहिये) ॥

यह मैत्रायणीय मानवगृह्यसूत्र का तेईशवां खण्ड तथा प्रथम पुरुष समाप्त हुआ ॥

इतिश्रीमानवगृह्यसूत्रस्य भीमसेनशर्मनिर्मितायां
नागरीभाषावृत्तौ प्रथमपुरुषः समाप्तः ॥

अथ द्वितीयपुरुषारम्भः

औद्वाहिकं प्रेतपिता शालाग्निं कुर्वीत ॥ १ ॥ अन्यत्र ततः प्रेते पितरि प्रज्वलयन्तोऽग्निं जागरयेयुः पर्वणि ज्यौत्स्ने पुण्ये नक्षत्रेऽन्यत्र नवम्याः ॥ २ ॥ स्नातः शुचिरहतवासाः ॥ ३ ॥ वाग्यतावरणिपाणी जागृतः ॥ ४ ॥ अवकाशेऽक्षतान्यवान् पिष्ट्वा मन्थमायौत्यनालब्धमिक्षुशलाकया बहुलम् ॥ ५ ॥ हिरण्यपाणिं सवितारं वायुमिन्द्रं प्रजापतिम् । विश्वान्देवानङ्गिरसो हवामहे । अमुं क्रव्या-

---

भाषार्थः-जिस का पिता मर गया हो वह विवाह सम्बन्धी शालाग्नि नाम आवसथ्याग्नि को विधिपूर्वक स्थापित करे । माता पिता जीवित रहें तब तक उन की सेवा करे (मनु० अ० २ । २३५ । जब तक माता पिता जीवें तब तक अन्य कुछ भी धर्म उन की सेवा का बाधक न करे) ॥ १ ॥ यदि पिता ने स्वयं पुत्र को भाग देकर अपने से पृथक् कर दिया हो तो पिता के जीवित रहते हुए भी पुत्रों को अग्निस्थापन कर्म का अधिकार है । और यदि पुत्रों से अन्यत्र देशान्तर में पिता मर जावे तब दोनों दशा में अमावास्या पौर्णमासी पर्व तिथि में अथवा शुक्ल पक्ष में नवमी तिथि को छोड़ के जिस दिन पुण्य नक्षत्र हो उसी दिन प्रज्वलित करते हुए विधिपूर्वक अग्नि को स्थापित कर मरण पर्यन्त जागृत सचेत रक्खें ॥ २ ॥ प्रथम अग्न्याधान का अङ्ग रूप स्नान करके दोनों पति पत्नी चौरेदार नये दो २ वस्त्र धारण करें ॥ ३ ॥ अग्नि स्थापन से पहिली रातको उत्तरारणि को पति और अधरारणि को पत्नी हाथ में ले मौन हो कर जागरण करें ॥ ४ ॥ अगले दिन उषःकाल से पहिले भूसी सहित सजे जौ पीस कर पात्र में न लगती हुई ईख की सलाई से बहुत से सत्तू घोले ॥ ५ ॥ (हिरण्यपाणिं०) मन्त्र पढ़ के घोले हुए जौ के आटा को अरणी से निकाले अग्नि पर सेचन करे जिस से पहिला अ-

दं शमयन्त्वग्निम् ॥ इति मन्थेनाग्निमवसिञ्चति ॥ ६ ॥ सोमोराजाविभजतूभाग्निर्विभाजयन् । इहैवास्तुहव्यवाहनोग्निः क्रव्यादं नुदस्व ॥ इति कटे कृतायां वाग्निं समारोप्य प्रहिणोति ॥ ७ ॥ क्रव्यादमग्निं प्रहिणोमिदूरं । यमराज्यंगच्छतुरिप्रवाहः । इहैवायमितरोजातवेदा देवेभ्योहव्यावहतुप्रजानन् ॥ इत्यग्निमादाय दक्षिणाप्रत्यग् घरन्ति ॥८॥ सहाधिकरणैर्यन्ति ॥ ९ ॥ स्वकृतइरिणे—सीसेमलिम्लुचामहे शिरोभिमुपबर्हणे । अव्यामसितायां मृष्ट्वाऽस्तंप्रेतसुदानवः॥ इति सीसमुपधाने न्यस्याध्यधि ॥ १० ॥ धाम्नोधाम्नइति तिसृभिः परोगोष्ठं मार्जयन्ते ॥ ११ ॥ अनपेक्षमाणाः प्रत्यायन्ति ॥ १२ ॥ नलैर्वेतसशाखया वा पदानि लोपयन्ते—मृत्योःपदानिलोपयन्ते यदेतद्द्राघीयआयुःप्रतिरंदधानाः । आप्यायमानाःप्रजयाधनेन शुद्धाःपूताभवन्तुयज्ञियासः॥१३॥ अनड्वाहंप्लवमन्वारभध्वं येनावेपत्सरमारपन्ती । इति॥१४॥

ग्नि बुत जावे ॥ ६ ॥ अथवा नयी बनायी हुई चटाई पर पहिले अग्नि को धरके अलग ले जावे ॥ ७ ॥ (क्रव्यादमग्निं०) मन्त्र पढते हुए पहिले अग्नि को नैर्ऋत्य दिशा में कुण्डों सहित ले जावें ॥ ८ । ९ ॥ फिर जंगल में स्वयं बनायी चटायी पर शिरो भाग में (सीसे मलिम्लु०) मन्त्र पढ़ के सीसा धर कर उस के समीप २ लाये हुए कुण्डों सहित अग्नि को स्थापन कर देवे ॥१०॥ फिर अग्निस्थान से पृथक् (धाम्नो धाम्न०) इत्यादि तीन मन्त्रों से सब लोग अपने घर मार्जन करें ॥ ११ ॥ फिर पीछे को न देखते हुए घर को लौटें ॥ १२ ॥ और लौटते हुए नरसल तृणों की कूंची से वा वेंत की डाली से पृथिवी में चलने से हुए अपने पगों के चिह्नों को (मृत्योः पदानि०) मन्त्र पढ़ के बिगाड़ते चले आवें ॥ १३ ॥ क्रव्याद नाम मुर्दा जलाने वाले अग्नि को

अग्न्यायतनमुद्धत्यावोक्ष्याग्न्याधेयिक्यान्पार्थिवान्संभारा-न्निवपत्यूषसिकतवर्जम् ॥ १५ ॥ अरणिभ्यामग्निं मथित्वा हिरण्यशकलं च न्युप्य प्रागुदयादुपस्थकृतो-भूरिति ज्वल-न्तमादधाति ॥ १६ ॥ गौर्वासः कांस्यं च दक्षिणा ॥ १७ ॥

इति प्रथमः खण्डः समाप्तः ॥

प्रागुदञ्चं लक्षणमुद्धत्यावोक्ष्य, स्थण्डिलं गोमयेनोप-लिप्य मण्डलं चतुरस्रं वाग्निं निर्मथ्याभिमुखं प्रणयेत् ॥१॥ दर्भाणां पवित्रे मन्त्रवदुत्पाद्याग्नेयं स्थालीपाकं श्रपयति ॥ २ ॥ पवित्रान्तर्हितेऽप आनीय तण्डुलानोप्य मेक्षणेन-

---

दूर जंगल में छोड़ कर लौटे हुए लोग (अनड्वाहं) मन्त्र पढ़ के बैलका स्पर्श करें ॥ १४ ॥ फिर से बनाये अग्निस्थापन के कुण्ड में किंचित् रेखा करने से उठी मट्टी को फंक के जल सेचन करके ऊपर की मट्टी और बालू को छोड़ कर सुअर की खोदी चीटी के बिल की और मूषे की खोदी मट्टी तथा कंकड़ी और जल इन अग्न्याधान सम्बन्धी पार्थिव पदार्थों को अग्नि के स्थापन के कुण्ड में नीचे धरे ॥ १५ ॥ फिर सब के ऊपर सुवर्ण का टुकड़ा कुण्ड में धर के उस पर अरणियों द्वारा मथ के निकाले प्रज्वलित अग्नि को सूर्योदय से पहिले पद्मासन से बैठा हुआ (भूः) ऐसा पढ़के कुण्ड में स्थापित करे ॥ १६ ॥ उस समय गौ वस्त्र और कांसे का पात्र अध्वर्यु को दक्षिणा में देवे ॥ १७ ॥

यह प्रथम खण्ड समाप्त हुआ ॥

फिर यज्ञ शाला में कुण्ड से पृथक् पूर्व की पांच और उत्तर को एक रेखा करके वहां से किंचित् मट्टी फेंक जल सेचन करके गोलाकार वा चौकोण स्थण्डिल वेदि को गोबर से लीप कर अग्नि मन्थन करके सम्मुख रक्खे ॥ १ ॥ दाभों के दो प्रादेश मात्र पवित्रों को तीन दाभों से (वैष्णवेस्थः) मन्त्र द्वारा छेदन करके अग्नि देवता के लिये स्थालीपाक पकावे ॥ २ ॥ पवित्र जिस पर धरें हों ऐसे चरुपात्र में जल लाकर उस में चावल गिरा के कुण्डस्थ अग्नि पर धर कर करछी स्थानी मेक्षण नामक यज्ञ पात्र से प्रदक्षिण क्रम से चावल

प्रदक्षिणं पर्यायुवन् जावत्तण्डुलं श्रपयति ॥३॥ घृतेनानुत्पूतेन नवनीतेन वोत्पूतेन शृतमभिघार्योत्तरत उद्वासयति ॥४॥ इमंस्तोममर्हतइत्यग्निं परिसमुह्य पर्युक्ष्य परिस्तीर्य पश्चादग्नेरेकवृद्बर्हिः स्तृणाति ॥५॥ उदक्प्राक्तूलान्दर्भानप्रक्रम्य दक्षिणांस्तथोत्तरानग्रेणाग्निं दक्षिणैरुत्तरानवस्तृणाति ॥६॥ दक्षिणतोऽग्नेर्ब्रह्मणे संस्तृणात्यपरं यजमानाय,पश्चार्द्धं पत्न्यै ॥७॥ उत्तरतः संस्तीर्णे पवित्रे स्रुक्स्रुवावाज्यस्थालीं प्रक्षाल्य संस्तीर्णे द्वे द्वे प्रयुनक्ति ॥८॥ तूष्णींदक्षिणत आज्यं निरुप्य मन्त्रवत्पर्यग्निं कृत्वा तूष्णींस्रुक्स्रुवौ संमृज्याऽदब्धेनत्वाचक्षुषा वेक्षइति पत्न्याज्यमवेक्षते ॥ ९ ॥ तूष्णीमधिश्रित्योपाधि

और जल को मिलाता हुआ किंचित् पकावे सम्यक् गलने न पावें अर्थात् अधपक्के हों तब ॥ ३॥ जिस का उत्पवन संस्कार न किया हो ऐसे घी से वा उत्पवन किये मक्खन से स्रुवाद्वारा चरु का अभिघारण करके अग्नि से उत्तर में उतार कर धरे ॥ ४ ॥ फिर (इमंस्तोममर्हत०) इस मन्त्र से अग्नि के सब ओर झाड़ के सब ओर जल सेचन और सब ओर कुशों से परिस्तरण करके अग्नि से पश्चिम में एक पर्त्त पूर्व को अग्रभाग करके एक मूठा कुश बिछावे ॥ ५॥ अग्नि के सब ओर कुश बिछाने की रीति यह है कि अग्निकुण्ड से उत्तर और दक्षिण में पूर्व को अग्रभाग करके तथा पूर्व पश्चिम में उत्तर को अग्रभाग करके बिछावे ॥६॥ अग्नि से दक्षिण में ब्रह्मा के लिये और ब्रह्मा से पश्चिम में यजमान के लिये और यजमान से दक्षिण पश्चिम को ओर पत्नी के लिये उन २ के आसन पर कुश बिछावे ॥७॥ अग्नि से उत्तर में बिछाये कुशों पर दो पवित्र स्रुक् स्रुव और आज्यस्थाली को प्रक्षालन करके बिछेकुशों पर दो २ पात्र धरे ॥ ८ ॥ अग्नि से दक्षिण में तूष्णीं बिना मन्त्र आज्यस्थाली में घृतपात्र से घी गिराके सूखे कुशजला कर घी के सब ओर मन्त्र पूर्वक फिराकर संमार्जन कुशों द्वारा तूष्णीं बिना मन्त्र स्रुक् और स्रुवा का संमार्जन करे और (अदब्धेनत्वा०) मन्त्र पढ़ के पत्नी घी को देखे ॥९॥ फिर तूष्णीं बिना मन्त्र पढ़े अध्वर्यु आज्य-

श्रित्य पश्चादग्नेरुपसाद्य मन्त्रवदुत्पूयावेक्षते ॥१०॥ तेजोऽसीत्याज्यं यजमानोऽवेक्षते ॥ ११ ॥ आज्यस्थाल्यां स्रुवं निधायाग्रेण स्थालीपाकमन्वायातयत्यपरेण मेक्षणम् ॥१२॥ तूष्णीं प्राञ्चमिध्ममुपसमाधाय, ब्रह्माणमामन्त्र्य ओंजुहुधीत्युक्ते, दक्षिणेन हस्तेनान्तरेण जानुनी प्राङासीन आघारौ जुहोति । प्राजापत्यमुत्तरार्द्धे प्राञ्चं मनसा, ऐन्द्रं दक्षिणार्द्धे प्राञ्चमेव ॥ १३ ॥ अथाज्यभागौ जुहोति । आग्नेयमुत्तरार्द्धे सौम्यं दक्षिणार्द्धे । समावनक्ष्णौ ॥१४॥ युक्तोवह । यदाकूतमिति द्वाभ्यामग्निं योजयित्वा । नक्षत्रमिष्ट्वानक्षत्रदेवतां यजेत्तिथिंतिथिदेवतामृतुमृतुदेवतां च ॥ १५ ॥ उपस्तीर्याप उपस्पृश्य

स्थाली को अग्नि पर रखके तपा के उतारले अग्नि से पश्चिम में आज्यस्थाली को रखके (विष्णोर्मनसा०) मन्त्रपूर्वक पवित्रों द्वारा उत्पवन करके घी को देखे ॥ १० ॥ फिर (तेजोऽसि०) मन्त्र पढ़के यजमान आज्य को देखे ॥११॥ फिर आज्यस्थाली में स्रुवा को धरके स्थालीपाक से आगे पूर्व में स्रुवा-सहित आज्यस्थाली को और उस से पश्चिम में मेक्षण को उत्तराग्रधरे ॥ १२ ॥ तदनन्तरतूष्णीं बिना मन्त्र पढ़े अग्नि पर पूर्व को अग्रभाग कर २ समिधा धरके (ब्रह्मन्जुहोष्यामि) ऐसा कहके ब्रह्मा से आज्ञा मांगे ब्रह्मा के (ओंजुहुधि) कहने पर पूर्वाभिमुख बैठा दोनों घोंटू (जानु) के बीच में हाथ करके दहिने हाथ से निम्नरीति से प्रथम आघार की दो आहुति करे प्रजापति का मन से ध्यान करता हुआ प्रजापति देवता के लिये अग्नि कुण्ड के उत्तरार्द्ध में पूर्व को झुकती हुई पहिली आघाराहुति स्रुवा द्वारा छोड़े । और इन्द्र देवता के लिये अग्नि कुण्ड के दक्षिणार्द्ध में पूर्वको झुकती दूसरी आघाराहुति स्रुवासे छोड़े ॥ १३ ॥ अब आज्यभाग की दो आहुति निम्न लिखित रीति से करे । अग्नि देवता के लिये कुण्ड के उत्तरार्द्ध में और सोम देवता के लिये कुण्ड के दक्षिणार्द्ध में कुटिलता रहित सरल स्वभाव से दोनों आहुति स्रुवा में घी भर २ के छोड़े ॥ १४ ॥ तदनन्तर (युक्तोवह० । यदाकू

मेक्षणेन स्थालीपाकस्यावद्यति मध्यात् (प्रथमं) पूर्वार्द्धाद् द्वितीयम् । पश्चार्द्धात्तृतीयं यदि पञ्चावदानस्य ॥१६॥ अवत्त मभिघार्य स्थालीपाकं प्रत्यभिघारयति ॥१७॥ अग्नये स्वाहेति मध्ये जुहोति ॥१८॥ यो देवानामसीति रौद्रस्य ॥१९॥ जया-न्हुत्वाऽऽज्यस्य स्विष्टकृते सकृदवद्यत्युत्तरार्द्धात्सकृद्द्विमात्रम् । द्विर्वा यदि पञ्चावदानस्य ॥२०॥ अवत्तं द्विरभिघार्य नात ऊर्ध्वं स्थालीपाकं प्रत्यभिघारयति ॥२१॥ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहेत्य-

तं०) इन दो मन्त्रों से अग्नि देवता का ध्यान करे अर्थात् अग्नि को सर्वरूप कर्म कर्त्ता क्रियादि रूप से देखे । फिर उस होम के दिन जो नक्षत्र जो तिथि और जो ऋतु हो तथा उन २ नक्षत्र तिथि और ऋतु के जो २ देवता हों उन सब के नाम से छः आहुति करे ॥१५॥ ये दश आहुति घी से करके प्रथम स्रुवा से थोड़ा घी स्रुच् में उपस्तार रूप गिरा के दहिने हाथ से जलस्पर्श कर मेक्षणद्वा-रा चरु के बीच से एक आहुति भाग लेके स्रुच् में धरे और चरु के पूर्वार्द्ध से-मेक्षण द्वारा आहुति का दूसरा भाग ले यदि पांच प्रवरों वाला यजमान हो तो चरु के पश्चिमार्द्ध से तीसरा अवदान लेवे ॥१६॥ फिर चरु पात्र में जहां २ से आहुति भाग लिये हों वहां २ स्रुवा से घी छोड़ के स्रुच् में धरे आहुति भागों के ऊपर एक स्रुवा घी का प्रत्यभिघारण करे ॥१७॥ फिर (अग्नये स्वाहा) मन्त्र से स्रुच् के चतुरवत्त वा पञ्चावत्त का होम करे ॥ १८ ॥ और (यो देवानां०) मन्त्र से रुद्र देवता के लिये चतुरवत्त वा पंचावत्त का प्रथमाहुति के तुल्य होम करे ॥ १९ ॥ इस प्रकार प्रधान होम की दो आहुति स्थालीपाक से करके तथा घी से जया होम की १३ आहुति करके स्रुच् में उपस्तार करके स्विष्टकृत् के लिये चरु के उत्तरभाग से एक ही बार में आहुति के दो भाग [एक अवदान अंगुष्ठ पर्वमात्र प्रमाण का होता है।] लेवे, यदि यजमान पंचावत्ती हो तो तीन अवदान के बराबर एक साथ लेवे ॥ २० ॥ फिर स्रुच् में ऊपर से अभिघारण करके चरु पात्र में जहां से अवदान लिया है उस पर स्रुवा भर के घी छोड़े पर इस से आगे चरु का अभिघारण न करे ॥ २१ ॥ फिर उत्तर पूर्व ईशान कोण में अन्य आहुतियों से न मिलती हुई

संसक्तमुत्तरार्द्धपूर्वार्द्धे जुहोति ॥२२॥ मेक्षणं दर्भांश्चाधायानुमतिभ्यां व्याहृतिभिश्च । त्वंनोअग्ने। सत्वंनोअग्ने । अयाश्चाऽग्नेऽसीत्येताभिर्जुहुयात् ॥ २३ ॥ वितेमुञ्चामिरशनांविरश्मीनिति च हुत्वा पवित्रेऽनुप्रहृत्याज्येनाभिजुहोति ॥२४॥ एधोऽस्येधिषीमहीति समिधमादधाति । समिदसिसमेधिषीमहीति द्वितीयाम् ॥ २५ ॥ आपोऽअद्यान्वचारिषमित्युपतिष्ठते ॥ २६ ॥ आपोहिष्ठीयाभिर्मार्जयते ॥ २७ ॥ पूर्णपात्रं दक्षिणा ॥ २८ ॥ बर्हिरनुप्रहरति ॥ २९॥ एतेन स्थालीपाकेन स्थालीपाकाः सर्वत्र व्याख्याताः ॥३०॥ इति द्वितीयः खण्डः ॥

अग्नयेस्वाहेति सायं जुहोति प्रजापतयइति द्वितीयाम् ॥१॥ सूर्यायस्वाहेति प्रातः । प्रजापतयइति द्वितीयाम्॥२॥

(अग्नये स्विष्ट०) मन्त्र से स्विष्टकृत् आहुति देवे ॥ २२ ॥ पश्चात् मेक्षण और ऊपरी दाभों को अग्नि में छोड़ कर अनुमति दो देवताओं के लिये (अन्वद्यनोऽनुमति०) इत्यादि दो मन्त्रों से तीन व्याहृतियों से तथा (त्वंनो अग्ने०) इत्यादि चार मन्त्रों से घी की आहुति दे के पवित्रों का होम कर देवे ॥२३।२४॥ फिर (एधोऽस्ये०) मन्त्र से एक तथा (समिदसि०) से दूसरी समिधा घी में डुबो के चढ़ावे ॥ २५ ॥ फिर (अपोऽअ०) मन्त्र से अग्नि का उपस्थान करे ॥२६॥ तदनन्तर (आपोहिष्ठा०) इत्यादि तीन ऋचाओं से मार्जन करे ॥२७॥ दोसौ छप्पन २५६ मुट्ठी भर चावल का पूर्ण पात्र दक्षिणा में देवे ॥ २८ ॥ पश्चात् वेदि के सब ओर बिछाये तथा अन्य कुशों का अग्नि में होम करे ॥ २९ ॥ इसी प्रकार सर्वत्र स्थालीपाकों का विधान जानो ॥ ३० ॥

यह दूसरा खण्ड समाप्त हुआ ॥

अब नित्य प्रति सायं प्रातःकाल का स्मार्त्त अग्निहोत्र दिखाते हैं (अग्नये स्वाहा) मन्त्र से एक और (प्रजापतयेस्वा०) मन्त्र से तूष्णीं दूसरी आहुति सायंकाल वैवाहिक अग्नि में दिया करे ॥ १ ॥ (सूर्याय० । प्रजापतये०)

अग्नीषोमीयः स्थालीपाकः पौर्णमास्यामैन्द्राग्नोऽमावास्यायाम् । उभयत्र चाग्नेयः । आगन्तुः पूर्वः पौर्णमास्यामुत्तरोऽमावास्यायाम् ॥ ३ ॥ आश्वयुज्यां पौर्णमास्यां प्रातर्नित्येषु स्थालीपाकेषु स्थालीपाकमन्वायातयति ॥४॥ तस्याग्निं रुद्रं पशुपतिमीशानं त्र्यम्बकं शरदं पृषातकं गाइति यजति ॥५॥ दधिघृतमिश्रः पृषातकः । तस्यानोमित्रावरुणा। प्रबाहवेति च हुत्वा । अम्भःस्थाम्भोवोभक्षीयेति गाः प्राशापयति ॥६॥ अत्रसृष्टाश्चवसेयुः ॥७॥ ब्राह्मणान् घृतवद्भोजयेत् ॥८॥ नानिष्ट्वाग्रयणेन नवस्याश्नीयात् ॥९॥ पर्वण्याग्रयणं कुर्वीत । वसन्ते यवानां शरदि व्रीहीणाम् ॥१०॥ अग्रपाकस्य

ये दो आहुति प्रातःकाल करे । प्रत्येक पौर्णमासी को अग्नीषोम देवता के लिये तथा प्रत्येक अमावास्या में इन्द्राग्नी देवता के लिये स्थालीपाक बनाके पूर्ववत् होम करे । और पौर्णमासी अमावास्या दोनों में अग्नि देवता के लिये स्थालीपाक का होम करे । तथा आग्रयणादि पर्वों में आन्त्याद्यर्थ जो नैमित्तिक कर्म कहा है उस को पौर्णमासी में पहिले और अमावास्या में पीछे से करे ॥३॥ आश्विन मास की पौर्णमासी में नियम से कहे अन्यस्थाली पाकों में ही इस स्थालीपाक को भी पका लेवे अर्थात् संमिलित (तन्त्र) कर देवे ॥४॥ उस आश्विन की पौर्णमासी में अन्यों के साथ बनाये चरु से (अग्नयेस्वाहा) इत्यादि नाम मन्त्रों को पढ़ २ के अग्नि, रुद्र, पशुपति, ईशान त्र्यम्बक और शरद् देवताओं के लिये यज्ञ करे तथा निम्न प्रकार पृषातक से गौओं का पूजन करे ॥५॥ दही और घी के मेल का नाम पृषातक है । उस पृषातक से (आनोमित्रा०) इत्यादि दो मन्त्रों से अग्नि में आहुति देकर (अम्भःस्था०) मन्त्र से शेष पृषातक गौओंको खवावे ॥६॥ गौएं उस समय बछड़ों से पृथक् रक्खी जावें ॥७॥ ब्राह्मणों को घृत सहित भोजन कराया जावे ॥८॥ नवान्नेष्टि किये विना नयी अन्न न खावे ॥९॥ वसन्त ऋतु की पौर्णमासी अमावास्यामें जौ से और शरद् का में चांवलों से नवान्नेष्टि करे ॥१०॥ पहिलेपहिल पके जौ वा चांवलों का दूध

पयसि स्थालीपाकं श्रपयित्वा । तस्य जुहोति । सजूरग्नीन्द्राभ्यां स्वाहा । सजूर्विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा । सजूर्द्यावापृथिवीभ्यां स्वाहा । सजूः सोमाय स्वाहेति ॥११॥ शरदि सोमाय श्यामाकानां वसन्ते वेणयवानाम् । उभयत्र वाज्येन ॥१२॥ वत्सः प्रथमजो दक्षिणा ॥१३॥ ब्राह्मणएव हविःशेषं भुञ्जीतेति श्रुतिः ॥१४॥ इति तृतीयः खण्डः समाप्तः ॥

पशुना यक्ष्यमाणः पाकयज्ञोपचाराग्निमुपचरति ॥१॥ पशुबन्धवत्तूष्णीमाक्दुदेवताहोमवर्जम् ॥२॥ प्रोक्षणालम्भाभ्यो-पपाद्य पर्यग्निं कृत्वा शामित्रं प्रणीय वपाश्रपणीभ्यामुदञ्चं प्रक्रममाणमन्वारभन्ते ॥३॥ संज्ञप्यमानमवेक्षते ॥४॥ संज्ञप्तं

में स्थालीपाक पका के उस का आघारादि के पश्चात् (सजूरग्नी०) इत्यादि चार मन्त्रों से प्रधान होम करे ॥११॥ इन में जो चौथी आहुति सोम देवता के लिये कही है उस को शरद् ऋतु में सामा से और वसन्त में वेणुयवों से करे अथवा दोनों समय सोमाहुति घी से करे ॥१२॥ पहिले वार ब्याना बछड़ा इस नवान्नेष्टि में आचार्य को दक्षिणा में देवे ॥१३॥ क्षत्रिय वैश्यों को भी नवान्नेष्टि आदि यज्ञ करने का तो अधिकार है परन्तु श्रुति में लिखा है कि क्षत्रियादि के यज्ञ में भी हविःशेष ऋत्विज् ब्राह्मण ही खावे यजमान भागभी क्षत्रियादि न खावे ॥ १४ ॥ यह तीसरा खण्ड पूरा हुआ ॥

पशुयाग करना चाहता हुआ पूर्व कहे पाकयज्ञ की रीति (पु०२खं०२सू०१) में कहे अनुसार वेदि में चिह्नादि कर अग्नि का मन्थन स्थापनादि करे ॥१॥ मानवकल्प सूत्र में लिखे पशुबन्ध कर्म के अनुसार यहां भी देवता होम को छोड़ के अन्य सब कृत्य विना मन्त्र तूष्णीं करे ॥२॥ पशु का प्रोक्षण,स्तुति,जल पिलाना और पशु के सब ओर अग्नि का अङ्गार घुमाना उत्तर में शामित्रशाला का नियत करना जब अध्वर्यु पशु को उत्तर की ओर ले चले तब वपाश्रपणी से उस का अन्वारम्भ यजमानादि करें इत्यादि सब काम विना मन्त्र करें ॥३॥ पशु के संज्ञपन को यजमान देखे ॥४॥ फिर पशु को स्नान करा के इन्द्राग्नी आदि जि-

स्नपयित्वा । यथादेवतं वपामुत्कृत्य श्रपयित्वाऽऽघारावाज्यभागौ हुत्वा । जातवेदोवपयागच्छ देवांस्त्वंहिहोता प्रथमो बभूव । घृतस्याग्नेतन्वासंभव सत्याःसन्तुयजमानस्य कामाः स्वाहा ॥ इति वपां जुहोति ॥ ५ ॥ स्वाहास्वाहेति परिवप्यौ ॥ ६ ॥ स्थालीपाकमन्वायातयति । समानदेवतं पशुना ॥ ७ ॥ तद्धुतावाज्यभागौ ॥ ८ ॥ अनिरुक्तः स्विष्टकृत् ॥ ९ ॥ पाशुबन्धिकानामवदानानां रसस्यावदाय दैवतैः प्रचर्य वसाहोमशेषेण दिशः प्रतियजति । यथा वाजिनेन । वनस्पतिस्माज्यस्य ॥ १० ॥ जयान् हुत्वा त्र्यङ्गाणां स्विष्टकृते समवद्यति ॥ ११ ॥ स्थालीपाकेन शेषो व्याख्या-

स देवता के उद्देश से पशुयाग हो उस के लिये वपा निकाल के पका कर तथा आघाराज्यभागों का होम करके (जातवेदोवपया०) मन्त्र से वपाश्रपणी पर पकायी वपा का अग्नि में होम करे ॥ ५ ॥ (स्वाहादेवेभ्यः) इस मन्त्र को पढ़ के वपाहोम से पहिले एक आहुति घी की करे और (विश्वेभ्यो देवेभ्यःस्वाहा) मन्त्र से वपा होम के पश्चात् घी की एक आहुति देवे ॥ ६ ॥ फिर पकाये हुए पुरोडाश स्थानी स्थालीपाक का अभिघारण कर उत्तर में उद्वासन करके पूर्व कहे अनुसार आहुति भाग स्रुच् में लेकर जिस देवता के लिये पशुयाग हो उसी के लिये स्थालीपाक का होम करे ॥ ७ ॥ आज्यभागों का होम वपा होम से पहिले इस में अवश्य करे किसी कारण से विकल्प न माने ॥ ८ ॥ स्विष्ट कृत् आहुति में स्विष्ट कृत शब्द को छोड़ के (अग्नयेस्वाहा) इतना ही मन्त्र यहां पढ़े ॥ ९ ॥ फिर पशुबन्ध याग सम्बन्धी अवदान लेकर उद्दिष्ट देवताओं के लिये होम करके वसा होम से पहिले घी से वनस्पति होम करें फिर वसा होम से शेष बची वसा को वाजिन के तुल्य प्रदक्षिण क्रम से सब दिशाओं में छोड़े ॥ १० ॥ फिर जया होम घी से करके तीन अंगों से स्विष्टकृत् आहुति के लिये अवदान लेवे । सूत्र ९ में कहे प्रकार इस अवसर में स्विष्टकृत् आहुति का होम करे ॥११॥

तः ॥ १२ ॥ पशोः पशुरेव दक्षिणा ॥ १३ ॥ इति चतुर्थःखण्डः समाप्तः ॥

रौद्रः शरदि शूलगवः ॥ १ ॥ प्रागुदीच्यां दिशि ग्रामस्यासकाशे निशि गवां मध्येऽतष्टो यूपः ॥ २ ॥ प्राक्स्विष्टकृतोऽष्टौ शोणितपुटान् पूरयित्वा—नमस्तेरुद्रमन्यवइति प्रभृतिभिरष्टभिरनुवाकैर्दिक्ष्वन्तर्दिक्षचोपहरेत् ॥३॥ नाऽशृतं ग्राममाहरेत् ॥ ४ ॥ शेषं भूमौ निखनेदपिचर्म ॥५॥ अपूपा-

पु० २ खं० २ में कहे स्थालीपाक के अनुसार इस पशुबन्ध कर्म का शेष कृत्य जानो ॥ १३ ॥ इस पशुयाग में पशु ही दक्षिणा में दिया जाय ॥ १४ ॥ यह चौथा खण्ड पूरा हुआ ॥

भावार्थः—शरद् ऋतु में रुद्र देवता के लिये शूलगव नामक यज्ञ करे ॥१॥ ग्राम वा नगर से ईशान दिशा के एकान्त शुद्ध जंगल में रात में गौओं के बीच विना छिला [यहां अठ पहलू यूप न होगा] यूप नामक यज्ञ स्तम्भ गाड़े ॥२॥ स्विष्टकृत् आहुति से पहिले अंजुली में आठ वार शोणित भर २ के प्रदक्षिण क्रम से ईशानादि आठ दिशाओं में मुख कर २ (नमस्ते रुद्र०) इत्यादि अनुवाकों से समर्पण करे ॥ ३ ॥ यदि ग्राम में हविष्य लावे तो विन पका कदापि न लावे ॥ ४ ॥ शेष बचे हविष्य को चर्म सहित पृथिवी में खोद कर गाड़ देवे ॥ ५ ॥ कोई ऋषि वा आचार्य अपूप नाम पुरोडाश वा मालपुआओं को ही पाकयज्ञ के पशु कहते मानते हैं। इस पक्ष में शोणित निवेदन का स्थानी अपूपों में से घी ले २ कर (नमस्ते०) आदि मन्त्रों से समर्पण किया जायगा। गृह्यसूत्रों में कहे सभी पशुयागों के लिये यह सामान्य कर सूत्रकारने प्रत्याम्नाय दिखाया है। सो जैसे फांसी देने वा अन्य प्रकार से किन्हीं को मरवा देने का अधिकार राजा का ही है साधारण का नहीं। तथा मनुष्य को अच्छा करने के लिये चीर फाड़ करने का अधिकार अच्छे २ डाक्टर वैद्यों का ही है सब का नहीं जैसे कमल के पत्तों पर जल नहीं लिपता पर अन्य सब पत्ते भींग जाते हैं वैसे ही उत्तमाधिकारी ज्ञानी विद्वानों के लिये ही पशु-

नेके पाकयज्ञपशूनाहुः ॥ ६ ॥ इति पञ्चमः खण्डः समाप्तः ॥

अथातो ध्रुवाश्वकल्पं व्याख्यास्यामः ॥१॥ आश्वयुज्यां पौर्णमास्याम् ॥ २ ॥ ऋत्विगव्यङ्गः स्नातः शुचिरहतवासाः ॥३॥ प्रागस्तमयान्निष्क्रम्योत्तरतो ग्रामस्यपुरस्ताद्वा शुचौ देशेऽश्वत्थस्याधस्तान्न्यग्रोधस्य वाऽपां वा समीपे वेद्याकृतिंकृत्वा तस्यां चतुष्कोणवनस्पतिशाखायामवसक्तचीरायां गन्धस्रग्दामवत्यां [अगृहीतशुक्लमाल्यनिकरवत्यां] चतुर्दिशं विन्यस्तोदकुम्भसहिरण्यबीजपिटिकायामपूपसक्तुलाजोल्लोपिकमङ्गलफलाक्षतवत्यां सर्वगन्धसर्वरससर्वौषधीः सर्वरत्नानि चोपकल्प्य प्रतिसरदधिमधुमोदकस्वस्ति

याग है। ऐसे घोर कलि काल में कोई ऐसे पशुयागों का अधिकारी नहीं है। । यदि सम्प्रति कोई शूलगव वा खं० ९। पु० २ में कहे पशुयागादि करना चाहे तो वह पुरोडाश वा मालपुआदि से उन २ के प्रत्याम्नाय करे। यही सारांश जानो ॥ यह पांचवां खण्ड पूरा हुआ ॥

भावार्थः—जिस यजमान के घर पर घोड़े रहते हों वह घोड़ों की पुष्टि और दृढ़ स्थिति के लिये आश्विनमास की पौर्णमासी के दिन ध्रुवाश्व कल्पनामक यज्ञ इस छठे खण्ड में कहे अनुसार करे ॥ १ । २॥ इस कर्म के ऋत्विज् किसी चक्षुआदि अंग से हीन नहीं स्नान करके शुद्ध हुए नये चीरेदार वस्त्र पहिनें ॥ ३ ॥ सूर्यास्त होने से पहिले ग्राम वा नगर से निकल के पूर्व वा उत्तर शुद्ध स्थान में जाकर पीपल वा वटवृक्ष के नीचे अथवा जलाशय के समीप पाशुक यज्ञ की वेदि के तुल्य वेदी बनाकर उस के चारो कोणों पर किसी यज्ञिय वनस्पति की शाखा गाड़ें चारों दिशा में चित्र विचित्र पताका लगावे, जिस में चन्दन तथा अगर आदि सुगन्ध, पुष्पमाला तथा रास्ना-नामक लता के पत्रादि की माला बन्दनवारादि में लगी हों तथा सब ओर जिस में सफेद फूल बिछाये गये हों तथा सुवर्ण जिन के भीतर डाला गया हो ऐसे बीजों से भरी पिटारी और जल से भरे घड़ा जिस के चारों दिशा

कनन्द्यावर्त्तवत्यामग्निं प्रणीय । अश्वत्थ [पलाश] ख-
दिररोहितकोदुम्बराणामन्यतमस्येध्ममुपसमाधाय तिस्रः
प्रधानदेवता [इति] यजत्युच्चैःश्रवसं वरुणं विष्णुमिति
स्थालीपाकैः पशुभिश्चाश्विनौ चाश्वयुजौ चाज्यस्य ॥४॥
जयान्हुत्वा । याऽओषधयः । समन्यायन्ति । पुनन्तु मा
पितरः । अग्नेर्मन्वइति चतुर्भिरनुवाकैरपोऽभिमन्त्र्याश्वा
न्स्नपयन्ति ॥ ५ ॥ गन्धस्रग्दामभिरलङ्कृत्य प्रदक्षिणं दे-
वयजनं त्रिःपरियन्ति ॥ ६ ॥ प्रहर्षं कारयन्ति ॥ ७ ॥ इष्टे
यथास्थानं व्रजन्ति ॥ ८ ॥ गौरनड्वांश्च दक्षिणा ॥९॥६खंडः

में धरे हों तथा, पूर्ण संकलपारे खसखस भुंजी खीलें अक्षतधान वा चा-
वल और मंगलकर्म जिन में विद्यमान हों तथा सर्व सुगन्ध सर्व रस तथा
ग्राम और वनकी सब ओषधियां जिस में विद्यमान हों और सब रत्न जिस
में विद्यमान हों तथा कलावा नया सूत दही शहद बलड्डू जिस में धरे गये
हों तथा चार दरवाजे वन्दनवार सहित हों तथा जिस के बीच गोल घेर हों
ऐसी वेदि के बीच अग्नि को स्थापित करके खेर लालकरंज और गूलरी इन
में से किसी एक वृक्ष की समिधा रख के उच्चैःश्रवा वरुण और विष्णु इन तीन
प्रधान देवताओं के लिये पूर्वोक्त प्रकार से बनाये स्थालीपाक द्वारा और पशु-
ओं द्वारा यज्ञ करे तथा अश्विनी और अश्वयुज् देवताओं के लिये घीसे होम
करे ॥ ४ ॥ फिर जया होम करके (या ओषध०) इत्यादि चार अनुवाकों से
जल का अभिमन्त्रण करके घोड़ों को स्नान करावें ॥ ५ ॥ केशर चन्दनादि सु-
गन्ध पुष्पमाला और रास्नादिक लताओं की माला आदि से घोड़ों को सुभू-
षित करके वेदि के सब ओर तीन वार घोड़ों से प्रदक्षिणा करावें ॥ ६ ॥ तद-
नन्तर घोड़ों से हींसने का शब्द करवावें ॥ ७ ॥ सामान्य प्रकरण में कहे अ-
नुसार आरम्भ समाप्ति का शेष काम यहां भी पूर्ववत् जानो । यज्ञ हो जाने
पर सब लोग अपने २ स्थान को जावें ॥ ८ ॥ इस प्रवाश्वकल्प कर्म की समा-
प्ति में एक गौ तथा एक बैल दक्षिणा में देवें ॥ ९ ॥ यह छठा खंड पूरा हुआ ॥

आग्रहायण्यां पौर्णमास्यां पयसि स्थालीपाकं श्रपयित्वा तस्य जुहोति—अपःश्वेतपदागहि पूर्वेणचापरेणच । सप्त च वारुणीरिमाः प्रजाः सर्वाश्च राजबान्धव्यः स्वाहा ॥ श्वेतो रूपत्यो विदधात्यश्वो दधद्गर्भं वृषः सत्वयां ज्योक् । स-मंजनाश्चक्रमपोवसानाः प्रोषादसाविरसिविश्वमेजत् । श्वे-ताय रौषिदश्वाय स्वाहा ॥ नवै श्वेतस्याभ्याचारे अहि-र्जघान किंचन । श्वेताय वैतहव्याय स्वाहा ॥ अभयं नः प्राजा-पत्येभ्यो भूयात्स्वाहा ॥इति ॥१॥ स्रस्तरेऽहतं वास उदग्दश-मास्तीर्योदकांस्येऽश्मानं व्रीहीन्यवान्वाऽस्य परिषिञ्चति-स्योनापृथिविभवेति द्वाभ्यां सुत्रामाणमिति द्वाभ्याम् ॥२॥ शमीशाखया च सपलाशयोदञ्चं त्रिः समुन्मार्ष्टि—स्योना पृथिविभवेति द्वाभ्यां सुत्रामाणमिति द्वाभ्यां नमोऽअस्तुसर्पेभ्य इति तिसृभिश्च ॥ ३ ॥ शाम्यन्तु सर्पाः स्वशया भवन्तु ये अन्तरिक्ष उत ये दिविश्रिताः । इमां महीं प्रत्यवरोहेम ।

भाषार्थः—अगहन मास की पौर्णमासी के दिन दूध में पु०२ख०२ में लिखे अनुसार स्थालीपाक पकाके आघारादि सामान्य कृत्य करके (अपःश्वेत०) इत्यादि मन्त्रों से स्थालीपाक की चार प्रधानाहुति करके जयादि होम अ-र्थ्यर्य ब्रह्मा को दक्षिणा और ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥१॥ इस कर्म का नाम सर्पयाग है । फिर रात को अध्वर्यु यजमान को स्रस्तरारोहण कर्म करावे । प्रथम बिछाये हुए कोमल पलाल पर उपर को चौरा करके नया वस्त्र छितयी वा चौतयी आदि बिछावे । फिर जल जिस में भरा हो ऐसे कांसे के पात्र में एक पत्थर तथा जौ वा धानों को (स्योना पृथिवि०) इत्यादि चार मन्त्रों से गिरावे ॥२॥ फिर पत्तों सहित शमी (छोंकर) वृक्ष की डाली से कांसे के पात्र से जल ले २ कर (स्योना पृथिवि०) इत्यादि सात मन्त्रों से बिछोना परमार्जन करे ॥३॥ फिर रात्रि को सोने के समय यजमानादि सब को उस बिछौना पर पूर्व को शिर पश्चिम को पग करा २ के दक्षिण से उत्तर की ओर को (शाम्यन्तु सर्पाः०)

शिवामजस्रां शिवां शान्तां सुहेमन्तामुत्तरामुत्तरां समां क्रियासम् ॥ इति ज्येष्ठप्रथमानुदीच आवेशयति ॥ ४ ॥ उदीर्ध्वं जीवो असुर्न आगादप:प्रागात्तमआज्योतिरेति । आरैक्पन्थां यातवे सूर्यायागन्म यत्र प्रतरं न आयुः ॥ इति कनिष्ठप्रथमानुज्जिहते ॥ ५ ॥ चैत्र्यामुद्रोहणम् ॥ ६ ॥ न तत्र स्थालीपाको न शाखया समुन्मार्ष्टि ॥ ७ ॥ अयंतल्पःप्रतरणोवसूनां विश्वाभिभ्यतल्पोअस्मान् । ज्योग्जीवेम सर्ववीरावयंतम ॥ इति तल्पमभिमन्त्रयते ॥ ८ ॥ त्रीणि नाभ्यानि फाल्गुन्यामाषाढ्यां कार्त्तिक्याम् ॥ ९ ॥ तासु नाधीयीत ॥ १० ॥ तासु पयसि स्थालीपाकः स व्याख्यातः ॥११॥

इति सप्तमः खण्डः समाप्तः ॥

इत्यादि मन्त्र पढ़ के लिटावे । सब से दक्षिण में सब से बड़े को उस से उत्तर २ में छोटे छोटों को लिटावे ॥ ४ ॥ फिर प्रातःकाल (उदीर्ध्वंजीवो०) मन्त्र पढ़ के छोटे छोटों को पहिले २ उठावे सब से पीछे सब से बड़े को उठावे ॥ ५ ॥ इस प्रकार पौष माघ फाल्गुन चैत इन चार महीनों में पलाल पर उक्त विधि से नित्य२ सोवें जागें । फिर चैत्रकी पौर्णमासी की रात्रि को खट्वारोहण [खटिया पर सोने उठने का विधि]करावे । यहां कांसे के पात्र में पत्थर जौ डाल के शमी शाखा से खट्वा का मार्जन और स्थाली पाक न करे ॥ ६ । ७ ॥ किन्तु (अयं तल्पः०) मन्त्र पढ़ के खट्वा का अभि मन्त्रण करे ॥ ८ ॥ और सोने के मन्त्र में पढ़े (इमां महीं) के स्थान में (इमंतल्पं) तथा (सुहेमन्ता) के स्थान में (सुवसन्ता) ऊह करे । फाल्गुन, आषाढ़ और कार्त्तिक मास की तीन पौर्णमासी ऋतु सन्धि होने से संवत्सरात्मक प्रजापति की नाभिस्थानी हैं इन्हीं में ग्रीत चातुर्मास्य पर्व कहे हैं ॥ ९ ॥ इन तीनों में वेद न पढ़े ॥१०॥ किन्तु इन तीनों में दूध में स्थालीपाक पका के प्रधान अग्नि देवता के लिये होम करे शेष विधि पु० २। खं० २ में व्याख्यान कर चुके हैं यह स्मार्त्तों में नाभ्य कर्म कहाता है ॥ ११ ॥

यह सातवां खण्ड पूरा हुआ ।

तिस्रोऽष्टकाः ॥१॥ ऊर्ध्वमाग्रहायण्याः प्राक्फाल्गुन्यास्तामि स्राणामष्टम्यः ॥ २ ॥ तासु नाधीयीत ॥ ३ ॥ तासु पयसि स्थालीपाकं श्रपयित्वा तस्य जुहोति—यादेव्यष्टकेष्वप- स्रापस्तमास्त्वपाअवयाअसि । त्वं यज्ञे वरुणस्यावयाअसि तस्यैतएनाहविषाविधेम ॥ १ ॥ उलूखलाग्रावाणोघोषमकु- र्वत हविःकृण्वन्तपरिवत्सरीयम् । एकाष्टके सुप्रजसः सुवी रा ज्योग्जीवेमबलिहृतोवयंते ॥ २ ॥ यांजनाः प्रतिनन्दन्ति रात्रींधेनुमिवायतीम् । संवत्सरस्य या पत्नी सा नो अस्तु सु- मङ्गली ॥३॥ संवत्सरस्यप्रतिमां येत्वारात्रीमुपासते । तेषा- मायुष्मतीं प्रजां रायस्पोषेणसंसृजस्व ॥ ४ ॥ इति । चतस्रः स्थालीपाकस्य ॥ ४ ॥ अष्टकायैसुराधसे स्वाहेति सर्वत्रा नुषजति ॥ ५ ॥ हेमन्तो वसन्तोग्रीष्मऋतवः शिवानः शि- वानो वर्षाअभयाश्शरन्नः । वैश्वानरोऽधिपतिः प्राणदोनो अहोरात्रेकृणुतांदीर्घमायुः ॥ १ ॥ शान्तापृथिवीशिवमन्तरि- क्षं द्यौर्नोदेव्यभयंकृणोतु । शिवा दिशः प्रदिश आदिशो न आ- पो विद्युतः परिपान्त्वायुः ॥२॥ आपोमरीचीःपरिपान्तुवि- श्वतो धातासमुद्रोअभयंकृणोतु । भूतंभविष्यदुतभद्रमस्तुमे ब्रह्माभिगूर्तंस्वराक्षाणः ॥ ३ ॥ कविरग्निरिन्द्रः सोमः सूर्यो वायुरस्तुमेअग्निर्वैश्वानरो अपहन्तुपापम् । बृहस्पतिः सवि-

अब अष्टका कर्म का विचार दिखाते हैं॥१॥अगहन की पौर्णमासी से फाल्गुन की पौर्णमासी तक कृष्णपक्षों की तीन अष्टमी होती हैं उन में वेद न पढ़े ॥२।३॥ उन अष्टमियों में दूध में स्थालीपाक बनाकर आघारादि विधिपूर्वक (या देव्यष्टके०) इत्यादि चारों मन्त्रों के अन्त में (अष्टकायैसुराधसे स्वाहा) इ- तना जोड़ के स्थालीपाक की चार प्रधानाहुति करे ॥ ४ । ५ ॥ फिर (हेमन्तो

ताशर्मयच्छतु श्रियंविराजंमयिपूषादधातु ॥ ४ ॥ विश्वआदित्यावसवश्चसर्वे रुद्रागोप्तारोमरुतश्चसन्तु । ऊर्जंप्रजाममृतंदीर्घमायुःप्रजापतिर्मयिपरमेष्ठीदधातु ॥ ५ ॥ इति पञ्चाज्यस्य ॥ जयान्हुत्वेडामग्नइति स्विष्टकृदिति ॥ ७ ॥ एवं सर्वासु ॥ ८ ॥ इत्यष्टमः खण्डः समाप्तः ॥

उत्तमायाः प्रदोषे चतुष्पथेऽङ्गशो गां कारयेत् ॥ १ ॥ योयआगच्छेत्तस्मै दद्यात्॥२॥ श्वोऽन्यां कारयेत्॥३॥ तस्या वपां जुहुयात्-वहवपांजातवेदः पितृभ्यो यत्रैतान्वेत्थनिहितान्पराके। मेदसोघृतस्यकुल्याअभिनिःस्रवन्तु सत्याःसन्तुयजमानस्यकामाःस्वाहा ॥इति॥४॥ अथास्यावक्षसउदगोदनं श्रपयति ॥५॥तस्याष्टकाहोमकल्पेन शेषो व्याख्यातः ॥६॥अवशिष्टं भक्तं रन्धयति ॥७॥ श्वोऽवशिष्टं भक्तंरन्धयित्वा पिण्डानामावृता त्रीन्मांसौदनपिण्डान्निदधाति ॥ ८ ॥ श्राद्धमपरपक्षे पितृ-

वसन्तो०) इत्यादि मन्त्रों से पांच आहुति घी की करे ॥ ६ ॥ फिर जयादि होम करके (इडामग्ने०) मन्त्र से स्विष्टकृत् आहुति करे ॥ ७ ॥ इसी प्रकार सब भाद्रपद की अष्टका में भी करे ॥ ८ यह आठवां खण्ड पूरा हुआ ॥

फाल्गुन की कृष्णाष्टमी को सन्ध्या के समय चौराहे पर गोयाग करे ॥१॥ जो २ यागदर्शनार्थ आवे उसे २ यज्ञ का प्रसाद खोया देवे ॥ २ ॥ प्रातः काल अगले दिन अन्य गोयाग करे ॥ ३ ॥ आघारादि के पश्चात् उस की वपाका होम (वह वपां०) मन्त्र पढ़के करे ॥ ४ ॥ इस के वक्षः से उत्तर में भात पकावे ॥ ५ ॥ इस का शेष विचार अष्टका होम के साथ व्याख्यान हो चुका जानो ॥ ६॥ अगले दिन प्रातःकाल शेष आधा भात रांधकर पिण्डदान की रीति से पितरों के लिये तीन पिंड देवे ॥ ७।८॥ इसी पु० २ खं० ५ में कहे अनुसार यहां भी पशु याग के स्थान में अपूपों द्वारा प्रत्याम्नाय ही सर्वथा श्रेयस्कर है

स्यो दद्यात् ॥९॥ अनुगुप्तमन्नं ब्राह्मणान्भोजयेत् । नावेदवि-
द्भुञ्जीतेति श्रुतिः ॥१०॥ यदि गवा पशुना वा कुर्वीत प्रोक्ष-
णमुपपायनं पर्यग्निकरणमुल्मुकहरणं वपाहोममिति ॥११॥
त्रैधं वपां जुहुयात् । स्थालीपाकमन्नदानानि च ॥१२॥ सो-
मायपितृमतेस्वधानम इति जुहोति । यमायाङ्गिरस्वतेपितृ-
मतेस्वधानम इति द्वितीयाम् । अग्नये कव्यवाहनायस्वधा-
नम इति तृतीयाम् ॥१३ एवं मासि मासि नियतम् । तन्त्रं
पिण्डपितृयज्ञे ॥१४॥ इति नवमः खण्डः ॥

वपाहोम जहां २ कहा है वहां २ सर्वत्र दूध की वा घी की मलाई उसी रीति से उतार के होम करना मत्याम्नाय ठीक है । पशुयाग लोक विद्विष्ट होने से त्याज्य है पिंडदान में अपूपका प्रत्याम्नाय जानो पितरों के लिये कृष्णपक्ष में श्राद्ध करना चाहिये ॥ ९ ॥ शूद्र पतित और रजस्वलादिने न देखा हो ऐसे सुरक्षित शुद्ध भात खीर मोहनभोगादि अन्न तीन आदि ब्राह्मणों को होमाहुतियों के पश्चात् श्राद्ध में भोजन करावे । वेद को न जानने वाले ब्राह्मण को श्राद्ध में भोजन न करावे ऐसा श्रुति में लिखा है (मनु०अ० ३।१८४।१८६) ॥१०॥ यदि कोई कभी गौ वा अन्य पशु से होम यज्ञादि करे तो वहां प्रोक्षण, स्तुति, पर्यग्निकरण, उल्मुकहरण और वपाहोम इन कामों को सर्वत्र करे ॥११॥ सर्वत्र श्राद्ध में वपाहोम, स्थाली पाक और अन्नावदान होम इन तीनों को (सोमायपितृ०) इत्यादि तीन मन्त्रों से तीन २ आहुति अग्नि में करे ॥ १२ ॥ १३ ॥ इस प्रकार महीने २ में प्रत्येक अमावास्या के दिन पितरो के लिये श्राद्ध करना चाहिये । और मानव कल्प सूत्र में कहे पिण्डपितृ यज्ञ के साथ मासिक श्राद्ध को तन्त्र कर लेना चाहिये ॥ १४ ॥ धर्मनिष्ठ सत्वगुणी पुरुष को मांस भक्षण कदापि कर्त्तव्य नहीं इसी लिये मांसद्वारा श्राद्ध भी इन लोगों को नहीं करना चाहिये किन्तु सुन्दर खोया खीर आदि से वे श्राद्ध करें । मांसाहार निषिद्ध होने पर भी जो २ जिस२ देश काल में मांसाहारी हों उन्हीं के लिये मांस से श्राद्ध होमादि का विधान जहां तहां जानो ।

यह नवम खण्ड पूरा हुआ ॥

फाल्गुन्यां पौर्णमास्यां पुरस्ताद्धानापूपाभ्यां भगं चार्यमणं च यजेत् ॥१॥ इन्द्राण्या हविष्यान् पिष्ट्वा पिष्टानि संयूय यावन्ति पशुजातानि तावतो मिथुनान्प्रतिरूपाञ्छ्रपयित्वा कांस्येऽभ्याज्यान्कृत्वा तेनैव—रुद्राय स्वाहेति जुहोति । ईशानायेत्येके ॥२॥ सायमपूपाभ्यां प्रचरत्यग्नीन्द्राभ्याम् ॥३॥ आग्नेयस्तुन्दिलः । न तस्य स्त्रियः प्राश्नन्ति । सर्वासामितरस्य ॥४॥ स्थालीपाकेनेन्द्राणीं—श्वो वा ॥५॥ संघेष्वेकवद्बर्हिरग्निराघारावाज्यभागाहुतयः स्विष्टकृच्च ॥६॥ अग्निरिन्द्रः सोमः सविता सरस्वत्यश्विनावनुमती रेवती राका पूषा रुद्र

भावार्थः—फाल्गुनी पौर्णमासी के दिन पहिले जौ के धाना और मालपुआ वा पुरोडाश बना के भग तथा अर्यमा दो देवताओं का आघारादि पूर्वक होम करके जया होम करे ॥१॥ तदनन्तर इन्द्राणी देवता के लिये जौ वा चावल पीस छान कर जितने पशु यजमान के घर हों उतने ही आटा के दो २ यथाकृति बनाके पकावे ऊपर से अभिघारण पु०२खं०२सू०४ के अनुसार करे फिर सायंकाल इन्द्राणी का चरु बनावे उसी में उन पिष्ट पशुओं को डालदेवे फिर कांसे के पात्र में नीचे घी डाल के उस पर धरी से ऊपर से अधिक घी छोड़ के रुद्र देवता के लिये आघारादि के अनन्तर प्रधान होम करे। किन्हीं का मत है कि ईशान देवता के लिये होमकरे ॥२॥ तदनन्तर सायंकाल दो मालपुआ बना के अग्नि और इन्द्र देवता के लिये आघारादि के पश्चात् प्रधान होम करे ॥३॥ अग्नि देवता का अपूप बीच में मोटा हो। उस अग्निदेवता वाले अपूप का शेष भाग स्त्रियां न खावें। पर इन्द्र देवता वाले को सब बालवच्चे खावें पीछे दक्षिणा दानादि कर्म समाप्त करें ॥४॥ तदनन्तर उसी दिन सायंकाल इन्द्राणी देवता के लिये स्थालीपाक बना के आघारादि पूर्वक इन्द्राणी का प्रधान याग और जयाहोमादि करे वा अगले दिन प्रातःकाल करे ॥५॥ अनेक प्रधान होम एक साथ मिला के तन्त्र करने हों तो एक बर्त कुश बिछाना अग्निस्थापन आघाराज्यभाग और स्विष्टकृत् इन सब कामोंको एकही एकबार करे बार २ नहीं ॥६॥ अब हलाभियोग कर्म जिस में हल जोड़ने का आरम्भ किया जाय उसमें

इत्येतैरायोजन, पर्य्ययन, प्रवपन, प्रलवन, सीतायज्ञ, खल यज्ञतन्तीयज्ञानडुद्यज्ञेष्वेता देवता इति यजति । सांवत्सरेषु च पर्वसु ॥ ७ ॥ नद्युदधिकूपतडागेषु वरुणं यजति । ओषधिवनस्पतिषु सोमम् । अनादिष्टदेवतेष्वग्निम् ॥ ८ ॥

इति दशमः खण्डः ॥

अवसानं समं समूलम् ॥ १ ॥ दक्षिणाप्रवणमन्नकाम-

पहिले दिन मातृपूजा तथा आभ्युदयिक श्राद्ध करे फिर अगले दिन अग्नि, इन्द्र, सोम, सीता, सविता, सरस्वती, सिनीवाली, अनुमती, रेवती, राका, पूषा और रुद्र इन देवताओं का निम्न लिखित कर्मों में होमादि द्वारा पूजन करे। आयोजन नाम खेत जोतने का सामान जोड़ना, प्रथम ही खेत में जाना पर्य्ययन, पहिले ही बीज बोना प्रवपन, प्रथमही पके खेत का काटना प्रलवन, यदि प्लवन पाठान्तर माना जाय तो पहिले ही खेत का भरना, फड़हू आदि से सीता नाम कूंड का पूजना सीतायज्ञ, जब अन्न काट कर खलियान में आ जावे तब खलयज्ञ और गाहि बीज शैला के अन्न की राशी तयार हो तब तन्तीयज्ञ होता और जब अन्न घर में आजावे तब मालामुकुटादि से बैल के सींगों का पूजन करना अनडुद्यज्ञ कहाता है। इन कामों में तथा वर्ष भरमें आने वाले गुरुपूनो शरद् पूनो आदि पर्व दिनों में सर्वप्रायश्चित्तों के साथ २ अग्नि आदि देवताओं के लिये (अग्नयेस्वाहा) इत्यादि नाममन्त्रों से प्रधान होम करे। उस में सामान्य विधि से पवित्रादि का आसादनादि आघाराज्य भाग पहिले और जया होमादि पीछे करे ॥७॥ नदी तलाव के मेल पर नदी समुद्र के मेल पर और नये कुआ तालाब बनवाने पर वरुण देवता के लिये प्रधान होम करे। ओषधियों के पकने पर वा खेत में प्रथम समागम होने पर पीपल आदि वनस्पतियों के प्रथम मिलने पर सोम देवतार्थ प्रधान होम करे और जहां कोई देवता नियत न हो वहां अग्निदेव के लिये होम करे ॥ ८ ॥

यह दशवां खण्ड पूरा हुआ ॥

भावार्थः—अब पञ्चमहायज्ञादि कर्म दिखावेंगे सो महायज्ञ घर में होते हैं इस लिये शालाकर्म अर्थात् नया घर बनाने का विचार दिखाते हैं। जिस में महायज्ञादि कर्म ठीक २ पूरे हो सकें ऐसा बड़ा समचौरस भूमि में जहां दूब

स्य । मारुकास्तत्र प्रजा भवन्ति ॥२॥ सर्वतः समवस्रावम् ॥३॥ समवस्रुत्य वा यस्मात्प्रागुदीचीरापो निर्वहेयुस्तद्वा ॥ ४ ॥ गर्त्तं खात्वा यत्तैः पांशुभिः प्रतिपूर्येत तद्वा ॥ ५ ॥ यदि धारयिष्णूदकतरं स्यात् ॥६॥ इदमहं विशमन्नाद्याय तेजसे ब्रह्मवर्चसाय परिगृह्णामीति वेश्म परिगृह्य । गर्त्तं हिरण्यं निधायाच्युताय ध्रुवाय भौमाय स्वाहेति जुहोति ॥ ७॥ समीचीनामासीति पर्यायैरुपतिष्ठते प्रतिदिशं—द्वाभ्यां मध्ये ॥ ८ ॥ उदकांस्येऽश्मानं व्रीहीन्यवान्वाऽस्य परिषिञ्चति—स्योनापृथिविभवेति द्वाभ्याम् । सुत्रामाणमिति द्वाभ्याम् ॥ शमीशाखया च सपलाशयोदञ्चं त्रिः समुन्मार्ष्टि—स्योना

दाभ आदि ओषधियों के मूल मौजूद हों ऊपर भूमि न हो वहां घर बनावे ॥१॥ जो अधिक अन्न चाहता हो वह दक्षिण के भाग में नीची भूमि में घर बनावे पर वैसी भूमि के घर में सन्तान उत्पन्न हो २ कर मर जाते हैं इस से वैसे स्थल में घर बनाना मना है ॥ २ ॥ जिस स्थल के सब ओर झरना आदिक से जल निकलता वा सब ओर नदी झील आदि हों वहां बनावे ॥ ३ ॥ अथवा जहां से निकल कर पूर्व वा उत्तर को जल बहता हो उस स्थल में घर बनावे ॥४॥ अथवा गर्त्त (गढ़ा) खोद के उसी खोदी मट्टी से फिर से भरे जिससे नीचे की शुद्ध मट्टी ऊपर हो जाय उस में घर बनावे ॥५॥ परन्तु जिस भूमि में गिरा जल शीघ्र ही सूख जावे उस में घर बनावे ॥६॥ (इदमहं०) मन्त्र पढ़ के घर बनाने के स्थल को सूत्र से नाप कर घेरा खेंचे। उस के बीच मध्य न स्तम्भ का गढ़ा खोदकर उस में सुवर्ण धर के उस पर (अच्युताय०) मन्त्र से संस्कार किये घी की एक आहुति स्रुवा से छोड़े ॥ ७ ॥ फिर (समीचीना०) इत्यादि दिशाओं के पर्याय वाचक शब्दों से प्रत्येक दिशा में मुख कर २ प्रदक्षिण उपस्थान करे और दो पर्यायों से बीच में उपस्थान करे ॥८॥ फिर कांसे के पात्र में जल लेके उस में पत्थर धान और जौ डाल के उस जल से (स्योनापृथिवि०) इत्यादि दो २ मन्त्र पढ़ २ दो वार सब घर को सींचे ॥ ९ ॥ फिर पत्तों सहित शमीवृक्ष की शाखा से (स्योनापृथि०) दो से एक वार

पृथिविम्भवेति द्वाभ्याम् । सुत्रामाणमिति द्वाभ्याम्—नमोऽस्तु सर्पेभ्यइति तिसृभिश्च ॥ १० ॥ इदं तत्सर्वतोभद्रमयमूर्जोऽयं रसः । प्राप्यैवं मानुषान्कामान्यदशीर्णीतं न्दलप्स्यसि ॥ इति मध्यमां स्थूणामासिच्य गर्त्त आसिञ्चति ॥ ११ ॥ इहैवतिष्ठनितरा तिल्वलास्थिरावती । मध्येपोषस्यपुष्यतामात्वाप्रापन्नघायवः ॥ आत्वाकुमारस्तरुण आत्वापरिसृतःकुम्भः । आवत्सोजगतासह, आदध्नःकलशैरयम् ॥ इति मध्यमां स्थूणामामन्त्रयते ॥ १२ ॥ वसूनांत्वावसुवीयस्याहोरात्रयोश्चेति गर्त्ते स्थूणामवदधाति॥१३॥ ऋतेऽवस्थूणाअधिरोहवंशो अग्नेविराजमुपसेधशत्रून् ॥ इति मध्यमं वंशमवदधाति ॥ १४ ॥ तूष्णीं शिष्टाः स्थूणा वंशाश्च ॥ १५ ॥ प्राग्द्वारं दक्षिणद्वारं वा मापयित्वा । गृहानहंसुमनसः प्रपद्येवीरंहीत्येतया प्रपद्यते यथा पुरस्ताद्व्याख्यातम् ॥ १६ ॥ प्रैतुराजावरुणोरेवतीभिरस्मिन्स्थाने-

(सुत्रामा०) दो से द्वितीय बार तथा (नमोऽस्तु०) इत्यादि तीन मन्त्रों से तृतीय बार सब घर को उत्तर की ओर तीन बार झाड़े ॥ १० ॥ फिर (इदंतत्सर्व०) मन्त्र को पढ़ के बीच के खम्भ का मार्जन कर बिना मन्त्र तूष्णीं गर्त्त में जल सेचन करे ॥ ॥ ११ ॥ (इहैव तिष्ठ०) इत्यादि मन्त्र पढ़ के मध्यम स्थूणा का आमन्त्रण करे ॥ १२ ॥ (वसूनांत्वा०) मन्त्र पढ़ के उस मध्यम स्थूणा को गर्त्त में रक्खे ॥ १३ ॥ (ऋतेऽवस्थूणा०) मन्त्र पढ़ के बीच के बांस (बंडेरा) को खम्भ पर धरे ॥ १४ ॥ बाकी सब स्थूणाओं को उन २ के गर्त्त में तथा बाकी बांसों को उन २ के स्थानों पर बिना मन्त्र रक्खे ॥ १५ ॥ इस प्रकार पूर्व वा दक्षिण को द्वार वाला घर तयार करके उस में (गृहानहम्०) मन्त्र पढ़ के (पु० १ खं० १४ सू० ३–६) तक में कहे अनुसार घर में प्रवेश करे और पूर्व कहा अग्नि स्थापन भी इसी अवसर में करे ॥ १६ ॥

तिष्ठतुपुष्यमाणः। इरांवहन्तीघृतमुक्षमाणास्तेष्वहंसुमनाः संवसाम ॥ इत्युत्तरपूर्वस्यां दिशि प्रातिपानमुदकुम्भमवस्थापयति ॥ १७ ॥ समुद्रंवःप्रहिणोमि स्वांयोनिमभिगच्छत । अरिष्टाअस्माकंवीरामापरासेचिमत्पयः ॥ इत्युदञ्चनम् ॥१८॥ वास्तोष्पत्यं पयसि स्थालीपाकं श्रपयित्वा तस्य जुहोति–अमीवहावास्तोष्पते । वास्तोष्पतइत्येताभ्याम् । वास्तोष्पतेप्रतरणोनएधि गयस्फानोगोभिरश्वेभिरिन्दो । अजरासस्तेसख्येस्याम पितेवपुत्रान्प्रतिनोजुषस्व ॥ वास्तोष्पतेशग्मयासंसदाते सक्षीमहिरण्वयागातुमत्या । पाहिक्षेमउतयोगेवरंनो यूयंपातस्वस्तिभिःसदानः ॥ इति ॥ १९ ॥ जयप्रभृति समानम् ॥ २० ॥ इत्येकादशः खण्डः समाप्तः ॥

वैश्वदेवस्य सिद्धस्य सायंप्रातर्बलिं हरेत् ॥ १ ॥ अग्नीषो-

पश्चात् (प्रैतु राजा०) इत्यादि मन्त्र पढ़ के घरके ईशान कोण में जल से भरा हुआ बड़ा मटका स्थापित करे ॥१७॥ (समुद्रंवः०) मन्त्र से बड़े मटका में से जल लेने के लिये मटका के समीप एक छोटा पात्र स्थापन करे ॥ १८ ॥ फिर पु० २ खं० २ में लिखे अनुसार दूध में वास्तोष्पति देवता के निमित्त स्थालीपाक पकाकर पवित्रादि का आसादनादि आघाराज्य भाग पर्यन्त कृत्य करके (अमीवहा०) (वास्तोष्पते०) (वास्तोष्पतेप्रतर०) (वास्तोष्पते शग्मया०) इन चार मन्त्रों से वास्तोष्पति देवता के लिये स्थालीपाक से चार प्रधानाहुति करे ॥ १९ ॥ तदनन्तर जया होमादि यहां भी पूर्ववत् करे। यह वास्तोष्पति यज्ञ वा वास्तुप्रतिष्ठा कर्म कहाता है ॥ २० ॥

यह ग्यारहवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

भाषार्थः–घर बनाने का प्रकार कह कर उस के स्थानविशेषों में बलिहरणरूप वैश्वदेव नामक कर्म का व्याख्यान दिखाते हैं। विश्वेदेवों के उद्देश से पकाया अन्न वैश्वदेव कहाता है उस अन्न से गृहस्थ सायं प्रातःकाल बलि कर्म करे ॥ १ ॥ इन पञ्चमहायज्ञों में यहां पहिले देवयज्ञ दिखाते हैं ॥१॥ अग्नि

मौ धन्वन्तरिं विश्वान्देवान्प्रजापतिमग्निं स्विष्टकृतमित्येवं होमो विधीयते ॥ २ ॥ अथ बलिं हरत्यग्नये नमः। सोमाय । धन्वन्तरये । विश्वेभ्योदेवेभ्यः। प्रजापतये । अग्नयेस्विष्टकृतइत्यग्न्यागार उत्तरामुत्तराम् ॥३॥ अद्भ्यइत्युदकुम्भसकाशे ॥ ४ ॥ ओषधिभ्य इत्योषधिभ्योवनस्पतिभ्य इति मध्यमायां स्थूणायाम् ॥ ५ ॥ गृह्याभ्यो देवताभ्यइति गृहमध्ये ॥ ६ ॥ धर्मायाधर्मायेति द्वारे ॥ ७॥ मृत्यवआकाशायेत्याकाशे ॥ ८ ॥ अन्तर्गोष्ठायेत्यन्तर्गोष्ठे ॥ ९ ॥ बहिर्वैश्रवणायेति बहिः प्राचीम् ॥ १० ॥ विश्वेभ्योदेवेभ्यइति वेश्मनि ॥ ११ ॥ इन्द्रायेन्द्रपुरुषेभ्यइति पुरस्तात् ॥ १२ ॥ यमाय यमपुरुषेभ्य इति दक्षिणतः ॥ १३ ॥ वरुणाय वरुणपुरुषेभ्य इति पश्चात् ॥ १४ ॥ सोमाय सोमपुरुषे-

---

२ सोम । ३ धन्वन्तरि । ४ विश्वेदेव । ५ प्रजापति । ६ अग्निस्विष्टकृत् । इन छः देवताओं के लिये (अग्नयेस्वाहा) इत्यादि प्रकार छः आहुति हविष्यान्न की अग्नि में देवे ॥ २ ॥ अब भूतयज्ञ कहते हैं । (अग्नयेनमः । सोमायनमः) इत्यादि मन्त्रों से अग्निस्थान यज्ञशाला में उत्तर २ को छः ग्रास धरे (अद्भ्योनमः) से जल भरे मटका के समीप ॥ ३ । ४ ॥ (ओषधिभ्योनमः) ओषधियों के समीप (वनस्पतिभ्योनमः) बीच के खम्भ के पास (गृह्याभ्योदेवताभ्योनमः) से घर के बीच ॥ ५ । ६ ॥ (धर्मायाधर्मायनमः) से द्वार पर (मृत्यवआकाशायनमः) से आकाश में बलि फेंके ॥ ७ । ८ ॥ (अन्तर्गोष्ठायनमः) से कोठा के भीतर ॥ ९ ॥ (बहिर्वैश्रवणायनमः) से घरसे बाहर पूर्व में (विश्वेभ्योदेवेभ्यो नमः) से घरके बीच में ॥ १० । ११ ॥ (इन्द्रायनमः । इन्द्रपुरुषेभ्यो नमः) से घरसे पूर्व में (यमायनमः । यमपुरुषेभ्योनमः) से घर के दक्षिण भाग में एक बलि धरे ॥१२ । १३॥ (वरुणायनमः। वरुण पुरुषेभ्यो नमः)से घर

भ्यइत्युत्तरतः ॥१५॥ ब्रह्मणे ब्रह्मपुरुषेभ्यइतिमध्ये ॥१६॥ प्राचीनापातिकेभ्यः लृम्पातिकेभ्य ऋक्षेभ्यो यक्षेभ्यः पिपीलिकाभ्यः पिशाचेभ्योऽप्सरोभ्यो गन्धर्वेभ्यो गुह्यकेभ्यः शैलेभ्यः पन्नगेभ्यः ॥ १७ ॥ दिवाचारिभ्यो भूतेभ्यइति दिवा । नक्तंचारिभ्यो भूतेभ्यइति नक्तम् ॥ १८ ॥ धन्वन्तरये धन्वन्तरितर्पणम् ॥ १९ ॥ अद्भिः संसृज्य पितृभ्यः स्वधेति शेषं दक्षिणा भूमौ निनयेत् ॥ २० ॥ पाणी प्रक्षाल्याचम्यातिथिं भोजयित्वाऽवशिष्टस्याश्नीयात् ॥ २१ ॥

इति द्वादशः खण्डः समाप्तः ॥

अथातः षष्ठीकल्पं व्याख्यास्यामः ॥ १ ॥ शुक्लपक्षस्य पञ्च-

के पश्चिम भाग में (सोमायनमः । सोमपुरुषेभ्यो नमः) से घरके उत्तर भाग में ॥ १४ । १५ ॥ (ब्रह्मणेनमः । ब्रह्मपुरुषेभ्यो नमः) से घर के मध्यभाग में ॥१६॥ (आपातिकेभ्योनमः) इत्यादि ग्यारह वाक्यों से ग्यारह बलि भी पूर्व में धरे (दिवाचारिभ्यो भूतेभ्योनमः) से दिन में (नक्तं चारिभ्यो भूतेभ्यो नमः) से रात में एक २ बलि बीच में धरे (धन्वन्तरये नमः) से एक बलि धन्वन्तरि की तृप्ति के लिये धरे ॥ १८ । १९ ॥ जितना बलि कर्म के लिये अन्न लिया था उस में से शेष बचे अन्न में किंचित् जल मिला के अपसव्य दक्षिणाभिमुख हो घर से दक्षिण में (पितृभ्यः स्वधा) कहकर एक बलि भूमि पर धरे ॥ २० ॥ फिर यथाविधि अतिथि को भोजन कराके हाथ पांव धोके शेष बचे अन्न को पति पत्नी खावें ॥ २१ ॥ पितरों के लिये जो एक बलि है वही पितृयज्ञ कहाता है ॥

यह बारहवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

भावार्थः—सैकड़ों हजारों गौआदि धन को चाहता हुआ गृहस्थ षष्ठी तिथि के दिन षष्ठीकल्प नामक कर्म को करे उस का व्याख्यान दिखाते हैं ॥ १ ॥ जिस महिने में यह कर्म करना इष्ट हो तब शुक्लपक्ष की पञ्चमी को पश्चिम की

म्यां प्रत्यङ्मुखो हविष्यमन्नमश्नीत ॥ २ ॥ अधः शयीत दर्भेषु शालिपलालेषु वा प्राक्शिरा ब्रह्मचारी ॥ ३ ॥ श्वोभूते उदित आदित्ये स्नानं पानं भोजनमनुलेपनं स्रजो वासांसि न प्रत्याचक्षीत ॥ ४ ॥ यावद्लब्धात्तावदश्नीयात् । यद्यद्दद्यात्तत्तदश्नीयादन्यत्रामेध्यपातकिभूयोऽभिनिविष्टवर्जम् ॥ ५ ॥ अस्तमित आदित्ये पयसि स्थालीपाकं श्रपयित्वा । अथैतैर्नामधेयैर्जुहोति–धनदां वसुमीशानां कामदां सर्वकामिनाम् । पुण्यां यशस्विनीं देवीं षष्ठीं शक्रजुषस्वमे ॥ नन्दी भूतिश्च लक्ष्मीश्च आदित्या च यशस्विनी । सुमना वाकुच सिद्धिश्च षष्ठी मे दिशतां धनम् ॥ पुत्रान्पशून्धनं धान्यं बहूश्वाजगवेडकम् । मनसा यत्प्रणीतं च तन्मे दिशतु हव्यभुक् ॥ कामदां रजनीं विश्वरूपां षष्ठीमुपवर्त्तु मे धनम् । सा मे कामा कामपत्नी षष्ठी मे दिशतां धनम् ॥ आकूतिः प्रकूतिर्वचनी धावनिः पद्मचारिणी मन्मना भव स्वाहा ॥ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् । ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥ नानापत्रकासा देवी पुष्टिश्चातिसरस्वती । अरिं देवीं प्रपद्येयमुपवर्त्तय-

और मुख करके हविष्यान्न खावे ॥ २ ॥ खटिया छोड़के नीचे पृथिवी पर दाभ वा पलाल बिछाके पूर्व को शिर पश्चिम को पग कर उस दिन सोवे ब्रह्मचारी रहे ॥ ३ ॥ अगले दिन प्रातःकाल सूर्योदय होने पर स्नान दुग्धपानादि भोजन चन्दन केशरादि का अनुलेपन पुष्पादि की माला और उत्तम नये वस्त्रों को व्रती होने पर भी प्राप्त हों तो त्याग न करे ॥ ४ ॥ जितना तथा जो २ भोज्य पदार्थ प्राप्त हो उतने २ उस २ को खावे पर लहसुन आदि अभक्ष्य न खावे और जिन का अन्न धर्मशास्त्र में वर्जित लिखा है उसे भी गवाल्न वा वासे अन्न को छोड़कर न खावे ॥ ५ ॥ फिर उस षष्ठी तिथि को सूर्य के अस्त होने पर दूध में स्थालीपाक पकाकर पवित्रासादनादि आघाराज्यभागपर्यन्त

तुमेधनम् । हिरण्यप्रकारादेविमांवर । आगच्छत्वायुर्यशश्च-स्वाहा ॥ अश्वपूर्णांरथमध्यां हस्तिनादप्रमोदिनीम् । श्रियं देवीमुपह्वयेश्रीर्मादेवी जुषताम् ॥ उपयन्तुमांदेवगणस्त्या-गोश्च तपसासह । प्रादुर्भूतोऽस्मिराष्ट्रेऽस्मिन् श्रीःश्रद्धांद-धातुमे ॥ श्रियै स्वाहा ॥ ह्रियैस्वाहा ॥ लक्ष्म्यै स्वाहा । उपलक्ष्म्यै स्वाहा । नन्दायै स्वाहा। हरिद्रायै स्वाहा । षष्ठ्यै स्वाहा । समृद्ध्यै स्वाहा । जयायै स्वाहा । कामायै स्वा-हेति ॥ ६ ॥ जयप्रभृति समानम् ॥ ७ ॥ षण्मासान्प्रयुञ्जीत त्रीन्वोभयतः पक्षान् ॥८॥ शतसाहस्रसंयोग एकवरो वा ॥९॥ गौरनड्वांश्च दक्षिणा ॥ १० ॥

इति त्रयोदशः खण्डः समाप्तः ॥

अथातो विनायकान् व्याख्यास्यामः ॥ १ ॥ शालकट-ङ्कटश्च कूष्माण्डराजपुत्रश्चोस्मितश्च देवयजनश्चेति ॥ २ ॥

कल्प पूर्वोक्त रीति से करके (धनदा०) इत्यादि मन्त्रों से स्थालीपाक द्वारा प्रधान होम करे ॥६॥ इस प्रकार वीश २० प्रधानाहुति करके जय होमादि पूर्ववत् करे ॥७॥ छः महिने तक छः वार शुक्लपक्ष की षष्ठी तिथियों में वा तीन महिनों के दोनों पाखों में छहो षष्ठी तिथियों में छः वार इस कर्म का अनुष्ठान करे ॥८॥ इस कर्म का फल सैकड़ों हजारों लाखों धन सुवर्णमुद्रादि वा गो आदि की प्राप्ति अथवा किन्हीं व्रतों में श्रेष्ठ पुत्रोत्पत्ति होना आदि है ॥ ९ ॥ इस में एक गौ तथा एक बैल आचार्य को दक्षिणा में देवे ॥ १० ॥

यह तेरहवां खण्ड पूरा हुआ ॥

भावार्थः=अब षष्ठीकल्प कर्म के पश्चात् शालकटंकटादि चार प्रकार के विनायक नाम भूत प्रेत विशेष कहाते हैं (विशेषेण नयन्ति प्रापयन्त्यनिष्टा-नीति विनायका भूतविशेषाः) विशेष कर अच्छे कामों में विघ्न पहुंचाने वा-ले चतुर्विध भूत विनायक कहाते हैं । विघ्न शान्ति के लिये जो विनायकों का पूजन किया जाता उस कर्म का नाम भी विनायक है ॥ १ । २ ॥ ये शाल क-

एतैरधिगतानामिमानि रूपाणि भवन्ति ॥ ३ ॥ लोष्टं मृद्नाति ॥ ४ ॥ तृणानि छिनत्ति ॥ ५ ॥ अङ्गेषु लेखान् लिखति ॥ ६ ॥ अपः स्वप्नं पश्यति ॥ ७ ॥ मुण्डान्पश्यति ॥ ८ ॥ जटिलान्पश्यति ॥९॥ काषायवाससः पश्यति ॥१०॥ उष्ट्रान्सूकरान् गर्दभान् दिवाकीर्त्यादीनन्यांश्चाप्रयतान्स्वप्नान्पश्यति ॥ ११ ॥ अन्तरिक्षं क्रामति ॥ १२ ॥ अध्वानं व्रजन्मन्यते पृष्ठतो मे कश्चिदनुव्रजति ॥ १३ ॥ एतैः खलु विनायकैराविष्टा राजपुत्रा लक्षणवन्तो राज्यं न लभन्ते॥१४॥ कन्याः पतिकामा लक्षणवत्यो भर्तॄन्न लभन्ते ॥ १५ ॥ स्त्रियः प्रजाकामा लक्षणवत्यः प्रजां न लभन्ते ॥ १६ ॥ स्त्रीणा-

---

टंकटादि विनायक जिन मनुष्यों को लगजाते हैं उन के चिह्न निम्न लिखित हैं ॥ ३ ॥ मट्टी के ढेलों को वह फोड़ता है ॥ ४ ॥ तिनकों को तोड़ता है ॥५॥ अपने शरीरांगों पर रेखा खेंचा करता है ॥ ६ ॥ सोते समय विशेष कर जलाशयों को देखता है ॥ ७ ॥ और सोते में मुंडे हुए सब बाल रखाये हुए और गेरुआवस्त्रों वाले साधु संन्यासियों को देखता है ॥ ८ । ९ । १० ॥ तथा ऊंट, सुअर (सूकर) गधा, भंगी (चाण्डालों) और ऐसे ही अन्य अपवित्र पतित नीच प्राणियों को भी वह भूत ग्रस्त पुरुष स्वप्न में देखता है ॥ ११ ॥ रात में सोता हुआ शून्य आकाश में उड़ता है ॥१२॥ मार्ग में चलता हुआ मानता है कि मेरे पीछे कोई चला आता है ॥ १३ ॥ इत्यादि विनायकों के चिह्न हैं और आगे कहे शुभफलों का नाश भी विनायकों का काम है । इन शाल कटंकटादि विनायकों से घेरे हुए उत्तम आचारों वाले भी राजकुमार राजगद्दी को नहीं पाते उन के राज्य लाभ में अनेक विघ्न हुआ करते हैं ॥ १४ ॥ उत्तम सती पतिव्रताओं के लक्षणों वाली पतियों की कामना रखने वाली कन्या पतियों को प्राप्त नहीं होतीं ॥ १५ ॥ सती पतिव्रतादि शुभ लक्षणों से युक्त स्त्रियां सन्तानों को चाहती हुई भी पुत्रादि को प्राप्त नहीं होतीं ॥१६॥

आचारवतीनामपत्यानि म्रियन्ते ॥ १७ ॥ श्रोत्रियोऽध्यापकआचार्यत्वं न प्राप्नोति ॥ १८ ॥ अध्येतॄणामध्ययने महाविघ्नानि भवन्ति ॥ १९ ॥ वणिजां वणिक्पथो विनश्यति ॥ २० ॥ कृषिकराणां कृषिरल्पफला भवति ॥ २१ ॥ तेषां प्रायश्चित्तम् ॥ २२ ॥ मृगाखरकुलायमृत्तिकारोचनागुग्गुलः ॥ २३ ॥ चतुर्भ्यः प्रस्रवणेभ्यश्चतुरुदकुम्भानव्यङ्गानाहरेत् ॥ २४ ॥ सर्वगन्धसर्वरससर्वौषधीः सर्वरत्नानि चोपकल्प्य प्रतिसरदधिमधुघृतमिति ॥ २५ ॥ एतान्संभारान्संसृज्य-ऋषभचर्मारोह्य-अथैनं स्नपयन्ति-सहस्राक्षं शतधारमृषिभिःपावनंकृतम् । ताभिष्ट्वाभिषिञ्चामि पावमानीःपुनन्तुत्वा ॥ अग्निनादत्ता । इन्द्रेणदत्ताः । सोमेनदत्ता । वरुणेनदत्ता । वायुनादत्ता । विष्णुनादत्ता । बृहस्पतिनादत्ता । विश्वैर्देवैर्दत्ता सर्वैर्देवैर्दत्ता

धर्मानुकूल शुद्ध आचारवाली स्त्रियों के भी छोटे २ सन्तान मरजाते हैं ॥१७॥ वेदवेदाङ्ग पढ़ा विद्वान् अध्यापक हो जाने पर भी आचार्य पदवी को नहीं प्राप्त हो ता (नचाचार्याः सूत्राणि कृत्वा निवर्त्तयन्ति) जिन के बनाये सूत्रादि फिर लौटें न जांय वे आचार्य कहाते हैं ॥ १८ ॥ विनायकों से आक्रान्त विद्यार्थियों के विद्याध्ययन में बड़े २ विघ्न होते हैं ॥ १९ ॥ विनायकों से घेरे वैश्यों का व्यापार नष्ट भ्रष्ट हो जाता है ॥ २० ॥ विनायकग्रस्त किसानों की खेती में बहुत कम पैदायश होने लगती है ॥ २१ ॥ इत्यादि विनायक अन्य विघ्नों की शान्ति के लिये प्रायश्चित्त करना चाहिये ॥ २२ ॥ वह विनायकों से ग्रस्त पुरुष, वन के मृगों ने खोद कर बनाये बिलों की मट्टी, रोली और गूगुल ॥ २३ ॥ बड़ी नदियों में से निकले चार सोताओं से जो टेढ़े वक्र वकुचे न हों ऐसे चित्र विचित्र चार घड़ों द्वारा (एक २ सोता से एक २ घड़ा ऐसे) चार घड़े जल लावे ॥२४॥ केशर कस्तूरी आदि सब सुगन्धित वस्तु, मिष्टादि छहो रस, ब्राह्मी आदि सब उत्तम ओषधि और पद्मरागादि सब रत्न, हाथ आदि में मङ्गलार्थ बांधने को रङ्गा हुआ सूत (कलावा) दही शहद इन सब चीजों

ओषधयआपोवरुणसंमिताः । ताभिष्ट्वाभिषिञ्चामि पाव-
मानीःपुनन्तुत्वेति सर्वत्रानुषजति ॥ यत्तेकेशेषुदौर्भाग्यं सीम-
न्तेयच्चमूर्द्धनि । ललाटेकर्णयोरक्ष्णोरापस्तद्घ्नन्तुतेसदा ॥
भगंतेवरुणोराजा भगंसूर्योबृहस्पतिः । भगमिन्द्रश्चवायुश्च
भगंसप्तर्षयोददुः ॥इति॥२६॥ अधिस्नातस्य निशायां सद्यः
पीडितसर्षपतैलमौदुम्बरेण स्रुवेण मूर्द्धनि चतस्रआहुतीर्जु-
होति ॥ ओंशालकटङ्कटाय स्वाहा ॥ कूष्माण्डराजपुत्राय
स्वाहा ॥ उस्मितायस्वाहा ॥ देवयजनाय स्वाहेति॥२७॥ अत
ऊर्ध्वं ग्रामचतुष्पथे नगरचतुष्पथे निगमचतुष्पथे वा सर्व-
तोमुखान्दर्भानास्तीर्य नवेशूर्पे बलिमुपहरति-फलीकृतांस्त-
ण्डुलानफलीकृतांस्तण्डुलानामं मांसं पक्वं मांसमामान्मत्स्या-

को एकत्र करके उन चार घड़ों में डाल कर मिला देवे । फिर विनायक नामक भूतग्रस्त पुरुष को (जो नपुंसक वधिया न किया गया हो ऐसे पुरुष) बैल के चर्म पर बैठा के उन चारो घड़ों से जल ले २ कर कोई उस का आचार्य पुरोहित विद्वान् (सहस्राक्षं शत०) इत्यादि मन्त्रों से स्नान करावे उस के शिर पर प्रत्येक मन्त्र के साथ जल धारा छोड़ता जावे । (अग्निनादत्ता । वायुनादत्ता) इत्यादि प्रत्येक वाक्यके साथ (ओषधय आपो०) से लेके (पावमानीः पुनन्तुत्वा) पर्यन्त मन्त्र का भाग जोड़२ के मन्त्र पढ़ २ स्नान करावे ॥२५।२६॥ फिर स्नान कराये उस पुरुष को चीरेदार शुद्ध वस्त्र धारण कराके बैठावे उसी दिन रातको तत्काल पीड़न करके निकाला सरसोंका तेल गूलर वृक्षकी लकड़ी से बने स्रुवा में ले २ कर (ओंशालकटं०) इत्यादि चार मन्त्रोंसे उसके मूर्द्धापर चार आहुति उस तेलकी छोड़े॥२७॥इसके पश्चात् ग्राम नगर वा निगम नाम वन के चौराहे पर सब चारों दिशा के मार्गों की ओर अग्रभाग कर २ कुश बिछावे उन कुशों पर पश्चिम को अग्रभाग करके एक नया सूप रक्खे उस पर नैवेद्य बतासा आदि का बलिदान धर के निम्न लिखित मूल फल पर्यन्त वस्तु भेंट

न्पक्कान्मत्स्यानामानपूपान्पक्कानपूपान् पिष्टान्गन्धानपिष्टान्गन्धान्गन्धपानं मधुपानं मैरेयपानं सुरापानं मुक्तं माल्यंग्रथितंमाल्यं रक्तं माल्यं शुक्लं माल्यं रक्तपीतशुक्लकृष्णनीलहरितचित्रवासांसि मापकल्माषमूलफलमिति ॥२८॥ अथ देवानामावाहनम् । द्विमुखः श्येनो वको यक्षः कलहो भीरुर्विनायकः कूष्माण्डराजपुत्रो यज्ञाविक्षेपी कुलङ्गापमारी यूपकेशी सूपरक्रोडो हैमवतो जम्भको विरूपाक्षो लोहिताक्षो वैश्रवणो महासेनो महादेवो महाराज इति ॥ एते मे देवाः प्रीयन्तां प्रीता मा प्रीणयन्तु । तृप्ता मां तर्पयन्त्विति ॥ २९ ॥ अधिष्ठितेऽर्धरात्रआचार्योगृहानुपतिष्ठते । भगवति भगं मे देहि ॥ वर्णवति वर्णं मे देहि । रूपवति रूपं मे देहि । तेजस्विनि तेजो मे देहि । यशस्विनि यशो मे देहि । पुत्रवति पुत्रान्मे देहि । सर्ववति सर्वान्कामान्मे दे-

समर्पितकरे । फटके चावल. भूसी सहित विन फटके चावल. कच्चामांस. पकामांस. कच्चीमछली. पकीमछली. कच्चे पुआ. पके पुआ. घिसे हुये केशरादि सुगन्ध. विन घिसे सुगन्ध. सुगन्धघोराजल. मधुपान–महुआका–मैरेय–गुड़ का मद्य और सुरा आटा का मद्य. विन गूंथी माला. लाल और सफेद माला. लाल पीला सफेद काला नीला और हराइन सब रङ्गोंसे चित्रित वस्त्र. उड़द. कुलथी. मूली आदि की जड़ और नीबू आदि फल इन सबका वलि सूपमें उपहार धरे॥२८॥ वलि भेंट करके देवताओं का आवाहन करे। अर्थात् द्विमुख आदि वीश देवताओं के संबुद्ध्यन्त नाम वोले सब के साथ (एहि) क्रिया लगावे जैसे (द्विमुखएहि ! श्येन एहि) इत्यादि । और (एतेमेदेवाः०) सब के आवाहन के अन्त में कहे ॥२९॥ फिर ठीक आधीरात होजाने पर आचार्य चौराहे से घर पर आकर गृहाधिष्ठात्री अम्बिका देवता का (भगवति भगं मे०) इत्यादि मन्त्रों से उपस्थान करे कोई लोग इसी अर्द्धरात्रि के समय (चत्वरपूजा) चौंतरे की पूजा करना भी

होति ॥३०॥ अतऊर्ध्वमुदितआदित्ये विमले मुहूर्त्ते सूर्यपूजापूर्वकमर्घ्यदानम्। उपस्थानं च। नमस्ते अस्तुभगवन् शतरश्मेतमोनुद । जहिमेदेवदौर्भाग्यं सौभाग्येनमांसंयोजयस्व ॥ इति-॥३१॥ अथ ब्राह्मणतर्पणम् ।३२। ऋषभो दक्षिणा ।३३।

इति चतुर्दशः खण्डः समाप्तः ॥

यदि दुःस्वप्नं पश्येद् व्याहृतिभिस्तिलान् हुत्वा दिश उपतिष्ठेत्---बोधश्चमाप्रतिबोधश्च पुरस्ताद्गोपायताम् । अस्वप्नश्चमानवद्राणश्च दक्षिणतोगोपायताम् । गोपायमानंचमारक्षमाणंच पश्चाद्गोपायताम् । जागृविश्चमारुन्धतीचोत्तरतोगोपायताम् । विष्णुश्चमापृथिवीचनागाश्चाधस्ताद्गोपायताम् । बृहस्पतिश्चमाविश्वेचमेदेवाद्यौश्चोपरिष्टाद्गोपायताम् ।१। एवं यस्मिंश्चोत्पन्नेऽनर्थोऽभिशङ्केत

इसीवार्त्त के साथ कहते हैं ॥ ३० ॥ इस के उपरान्त सूर्य का उदय होने पर अर्थात् ठीक २ प्रकाश हो जाने पर सूर्यनारायण का मन से ध्यान उपासना स्तुति आदिरूप पूजा करके अर्घ्य देवे और (नमस्तेअस्तु०) मन्त्र द्वारा सूर्यदेव का उपस्थान करे ॥ ३१ ॥ फूल दूर्वा तथा सरसों सहित जल की अंजुली भर कर विनायक के लिये अर्घ देकर अम्बिका और गणपति जी का पूजन करे। फिर ब्राह्मणों को भोजन करावे और आचार्य को एक बैल दक्षिणा में देवे ॥ ३२ । ३३ ॥

यह चौदहवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

यदि अनिष्ट सूचक ऊंट गधादि पर चढ़ना आदि दुःस्वप्न दीखे तो जागने पर आघारादि सामान्य विधि के पश्चात् व्यस्त और समस्त चार व्याहृतियों से घृत मिलाये तिलों का होम करके (बोधश्चमा०) इत्यादि छः मन्त्रों से क्रमशः पूर्व दक्षिण पश्चिम उत्तर नीचे तथा ऊपर की छः दिशाओं के देवताओं का उपस्थान उस २ ओर मुख करके करे ॥१॥ इसी प्रकार लाल वस्त्र धारण की हुई स्त्री से स्वप्न में समागम आदि हो वा जागते में बिना शिर के

।२। व्याहृतिभिस्तिलान् हुत्वा तपः प्रतिपद्येत द्वादशरात्रं षड्रात्रं त्रिरात्रमेकरात्रं वा । ३ । यदि समुत्पातं मन्येत तद्वा ।४। यदि पर्वसु मार्त्तिकं भिद्येत–पार्थिवमसिपृथिवीं-दृंह स्वयोनिं गच्छस्वाहेत्यप्सु प्रहरेत् । ५ । यद्यर्चा दह्येद्वा नश्येद्वा प्रपतेद्वा प्रभज्येद्वा प्रहसेद्वा प्रचलेद्वा । स्थाल्या वा स्थालीमासिच्य दक्षिणोत्तरा वा स्थाली भिद्येतोत्तरावोपलाशे नियम्य । द्वारवंशो वा स्फुटेत् । गौर्वा गां धयेत् । स्त्री वा स्त्रियमाहन्यात् । कर्त्तसंसर्गे हलसंसर्गे मुसलसंसर्गे मुसलप्रपतने मुसलं वाऽवशीर्यैतान्यस्मिंश्चाद्भुत-एताभिर्जुहुयात् । स्वस्तिनइन्द्रोवृद्धश्रवाःस्वस्तिनःपूषा-

पुरुष की छाया दीख पड़ना आदि अनिष्ट सूचक निमित्तों की शङ्का हो तो॥२॥ घी मिले तिलों से व्याहृतियों द्वारा होम करके, बारह, छः, तीन वा एक दिन अनिष्ट सूचना के अनुसार (अनिष्ट शकुन का न्यूनाधिक बल देख कर) तप करने में लग जावे ॥ ३ ॥ यदि कोई सम्यक् बड़ा उत्पात अनिष्ट माने जैसे भयंकर वायु चले उस में कंकड़ी वर्षे वृक्षोंमें से रुधिर वर्षे इत्यादि हो तो पूर्वोक्त तिल द्वारा व्याहृति होम दिग्देवोपस्थान सहित करे अथवा बारह दिन आदि के तप के साथ तिल होम करे ॥ ४ ॥ यदि अमावास्यादि पर्व दिनों में मट्टी की भीत आदि अकारण फट जावे तो फूटे घड़े का खप्पर आदि (पार्थिवमसि०) मन्त्र से जल में फेंक देवे ॥ ५ ॥ अथवा यदि शिव विष्णु आदि देवताओं की सुवर्ण चांदी पीतल पत्थर काष्ठादि की बनी प्रतिमा जलने लगे , वा स्वयं लुप्त होजावे वा फूट जावे वा अपने आसन से पृथक् गिर जावे वा बिना ही कारण टुकड़े २ हो जावे वा चेतन मनुष्य के तुल्य हंसने लगे वा जहां धरी हो वहां से अन्यत्र चली जावे एक बटलोईका जल दूसरीमें चला जावे और फिर उसीमें आजावे और उन दोनों में से दहिनी वा बायीं बटलोई आदि पात्र स्वयं भिड़कर टूट जावे अथवा बायीं बटलोई एक ही बिना कारण फूट जावे । द्वारका खम्भ वा सदैल

विश्ववेदाः । स्वस्तिनस्तार्क्ष्योअरिष्टनेमिःस्वस्तिनोबृहस्प-
तिर्दधातु ॥ स्वस्तिनोमिमीतामश्विनाभगः स्वस्तिदेव्य-
दितिरनर्वणः । स्वस्तिपूषाअसुरोदधातुनः स्वस्तिद्यावापृ-
थिवीसुचेतुना ॥ स्वस्तयेवायुमुपब्रवामहे सोमंस्वस्तिभुवन-
स्ययस्पतिः । बृहस्पतिंसर्वगणंस्वस्तये स्वस्तयआदित्यासो-
भवन्तुनः ॥ विश्वेदेवानोअद्यास्वस्तये वैश्वानरोवसुरग्निः-
स्वस्तये । देवाअवन्त्वृभवःस्वस्तये स्वस्तिनोरुद्रःपात्वंहसः ।
स्वस्तिनःपथ्यासुधन्वसु स्वस्त्यप्सुवृजनेस्वर्वतः । स्वस्ति-
नःपथ्याकृतेषुयोनिषु स्वस्तिरायेमरुतोदधातुनः ॥ त्रातार-
मिन्द्रं-मातेअस्यां । विनइन्द्र । मृगोनभीमः । तच्छंयोरा-
वृणीमहइतिदशाहुतयः । ६ । जयप्रभृति समानम् । ७ ।

इति पञ्चदशः खण्डः समाप्तः ॥

सर्पेभ्यो बिभ्यत् श्रावण्यां तूर्ष्णीं भौममेककपालं श्र-
पयित्वाक्षतसक्तून् पिष्ट्वा स्वकृतइरिणेदर्भानास्तीर्य्याच्युता-

---

बिना कारण टूट जावे अथवा उस में अङ्कुर निकल आवें। अथवा गौ को गौ चोंखे (गौ का दूध गौ पीवे) वा कोई स्त्री अन्य स्त्री को पीटे मारे वा परस्पर स्त्रियां बाहु युद्ध करें। खेतादि काटने के समय दो दात्र (हंसिया वा दरांत) अकारण भिड़जावें कई हल खेत में चलते हों वे अकस्मात् भिड़ जावें। अथवा धानादि कूटने में दो मूसल भिड़जावें वा दात्रादि भिड़ के अकस्मात् टूट जावें। ऐसे ही अन्य कोई राहुदर्शनादि आश्चर्यजनक शकुन होने पर आघारादि सामान्यविधि के पश्चात् (स्वस्तिनइन्द्रो०) इत्यादि पांच और (त्रातारमिन्द्रं०) इत्यादि पांच इन दश मन्त्रों से घी की दश प्रधानाहुति करे ॥ ६ ॥ पश्चात् जयहोमादि यहां भी पूर्ववत् जानो ॥ ७ ॥ यह पन्द्रहवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

भाषार्थः—सांपों से डरता हुआ मनुष्य श्रावणी पौर्णमासी के दिन भूमि-पर तूर्ष्णीं बिना मन्त्र पढ़े एक कपालका पुरोडाश पका कर (परन्तु होम प-

य अच्युताय भौमाय स्वाहेतिजुहोति ।१। समीची नामासीति पर्यायैरुपतिष्ठते प्रतिदिशं द्वाभ्यां मध्ये ॥२॥ अक्षतसक्तूनां सर्पबलिं हरति। ईशानायेत्येके। सर्पोसि सर्पाणामधिपतिस्त्वयि सर्वे सर्पाः। बलिहारोऽस्तु सर्पाणां माक्षिषुर्मा रीरिषुर्मा हिंसिषुर्मा दाङ्क्षुः सर्पाः ॥ मा नो अग्ने विसृजो अघायाविष्यवे रिपवे दुच्छुनायै। मा दत्वते दशते मादते नो मा रीषते सहसावन्परादाः ॥ सर्पोसि सर्पाणामधिपतिरन्येन मनुष्यांस्त्रायसेऽपूपेन सर्पान्। त्वयि सन्तं मयि सन्तं माक्षिषुर्मा रीरिषुर्मा हिंसिषुर्मा दाङ्क्षुः सर्पाः ॥ नमो अस्तु सर्पेभ्य इति तिसृभिश्च ।३। ध्रुवामुं ते परिददामीति सर्वामात्यान्नामग्राहमात्मानं च ॥४॥ एतेन धर्मेण चतुरो मा-

---

र्यन्त श्रौत में कही पुरोडाश की कार्यवाही यहां न की जाय) स्वयं बनाये ऊपर भूमिस्थ वेद्याकारस्थण्डिल पर दर्भ बिछा के उस पर अग्निस्थापन प्रज्वलनादि आज्यभागान्त करके प्रधान होमके स्थान में (अच्युताय०) इत्यादि मन्त्र पढ़के पुरोडाश का होम कर देवे। और बिन कुटे भूसी सहित भुंजे जौ पीस कर ॥१॥ (समीचीनामासि०) इन पर्यायवाची मन्त्रों से सब पूर्वादि दिशाओं में मुख कर २ उपस्थान करे और दो मन्त्रों को पढ़ २ के बीच में ऊपर नीचे की दिशा का उपस्थान करे ॥ २ ॥ फिर उन पीसे हुये सत्तुओं की बलि (सर्पोऽसि०) इत्यादि तीन और (नमोऽस्तुसर्पे०) इत्यादि तीन मन्त्रों से देवे। जिस जगह बलि देवे वहां पहिले जलसेचन करके ऊपर से बलि धर के फिर जल सेचन करे। कोई लोग सूप में बलि धरना कहते हैं उन के मतानुसार सूप में बलियों के नीचे ऊपर जल सेचन होना चाहिये ॥ ३ ॥ फिर (ध्रुव !यज्ञदत्तं ते परिददामि) इत्यादि प्रकार अपने सब स्त्री पुत्रादि को देवता के आधीन रक्षार्थ समर्पित करे और अन्त में यज्ञदत्त नाम के स्थान में अपना नाम लेकर अपने को भी रक्षार्थ देवता के आधीन करे ॥४॥

सान्सर्पबलिं हृत्वा विरमति ॥५॥ तूष्णीमपि शूद्रा प्रक्षालितपाणिः ॥६॥ इति षोडशः खण्डः समाप्तः ॥

अथूथिके भयार्त्ते कपोते गृहान्प्रविष्टे तस्याग्नौ पदं दृश्येत दधनि सक्तुषु घृते वा। देवाः कपोतइति प्रत्यृचं जपेज्जुहुयाद्वा। देवाः कपोत इषितो यदिच्छन्दूतो निर्ऋत्या इदमाजगाम। तस्मा अर्चाम कृणवाम निष्कृतिं शंनो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे॥ शिवः कपोत इषितो नो अस्त्वनागा देवा शकुनो गृहेषु। अग्निर्हि विप्रो जुषतां हविर्नः परिहेतिः पक्षिणी नो वृणक्तु॥ हेतिः पक्षिणी न दभात्यस्मानाष्ट्र्यां पदं कृणुते अग्निधाने। शंनोगोभ्यश्चपुरुषेभ्यश्चास्तु मानो हिंसीदिह देवाः कपोतः॥ यदुलूको वदति मोघमेतद्यत्कपोतः पदमग्नौ कृणोति। यस्य दूतः प्रहितएषएतत्तस्मै यमाय नमोअस्तु मृत्यवे॥ ऋचा कपोतं नुदत प्रणोदमिषं मदन्तः परिगां नयध्वम्। संयोपयन्तो दुरितानि विश्वा हि त्वा नऊर्जं प्रपतात्पतिष्ठः॥ इति ।१। पदमादाय दक्षिणा प्र-

इसी प्रकार भादों क्वार कार्त्तिक और मार्गशीर्ष अगहन इन चार महिने तक नित्य सर्प बलि देकर विराम करे ॥५॥ यदि किसी ब्राह्मणादि द्विज के यहां शूद्रा स्त्री हो तो वह हाथ पांव धोके विना मन्त्र तूष्णीं पूर्वोक्त सर्पबलि कर्म करे ॥६॥ यह सोलहवां खण्ड पूरा हुआ ॥

भाषार्थः—जो अपने झुण्ड में से पृथक् बिछुरि गया हो श्येनादि हिंसक पक्षियों से डर गया हो ऐसा कबूतर अकस्मात् घर में आजावे उस कबूतर के पग का चिह्न अग्निशाला में दही वा दूध दही मठा के पात्र में सत्तुओं में वा घी में इत्यादि में दीख पड़े तो (देवाःकपोत०) इत्यादि पांच ऋचाओं का जप करे वा सामान्यविधि के सहित इन पांच मन्त्रों से प्रधान होम घृत का करे ॥१॥

त्यगहरन्ति ।२। सहाधिकरणैर्यन्ति । ३ । स्वकृतइरिणे पदं न्यस्याध्यधि ।४। धाम्नोधाम्नइति तिसृभिः परोगोष्ठं मार्जयन्ते ।५। अनपेक्षमाणाः प्रत्यायन्ति ।६। अग्न आयूंषि पवसे। अग्निर्ऋषिः। अग्ने पवस्वेति प्रत्येत्य जपन्ति ॥ ७ ॥

इति सप्तदशः खण्डः समाप्तः ॥

पाडाहुतं प्रतिपदि प्रतिपदि पुत्रकामः ।१। पयसि स्थालीपाकं श्रपयित्वा तस्य जुहोति । ब्रह्मणाग्निः संविदानो रक्षोहा बाधतामितः। अमीवा यस्ते गर्भं दुर्णामा योनिमाशये॥ यस्ते गर्भममीवा दुर्णामा योनिमाशये। अग्निष्टं ब्रह्मणा सह निष्क्रव्यादमनीनशत् ॥ यस्ते हन्ति पतयन्तं निषत्स्नुं

जिस वस्तु में कबूतर के पग का चिन्ह पड़ा हो उस चिन्हित वस्तु को लेकर नैर्ऋत दक्षिण दिशा में (पु० २ खं० १ सू० ८ आदि में कहे अनुसार) लेजावें ॥२॥ जिस वस्तु में कबूतर का पग पड़ा हो उस २ को वर्त्तन सहित लेकर नैर्ऋत दक्षिण दिशास्थ जंगल में जावें ॥ ३ ॥ वहां स्वाभाविक ऊसर भूमि में ऊपर ऊपर पग के चिह्न युक्त वस्तु को तथा अन्य वर्त्तनादि धर देवें ॥ ४ ॥ फिर (धाम्नोधाम्न०) इत्यादि तीन ऋचाओं से द्वेष करने योग्य शत्रु के स्थान का मार्जन करे अर्थात शत्रु के घर के उद्देश से मार्जन करें ॥ ५ ॥ फिर पीछे को न देखते हुए वहां से घर को लौट आवें ॥६॥ तदनन्तर घर में आकर अध्वर्यु ब्रह्मा और यजमान तीनों (अग्नआयूंषि०) इत्यादि तीन ऋचाओं का जप करें ॥७॥ यह सत्रहवां खण्ड पूरा हुआ ॥

भावार्थः—जिस के पुत्र न होते हों और उस को पुत्र की विशेष चाहना हो तो प्रत्येक महिने की दोनों प्रतिपदा के दिन निम्न रीति से पाडाहुत कर्म करे ॥१॥ पूर्वोक्त प्रकार दूध में स्थालीपाक पका कर और ठीक २ सामान्य विधि आघाराज्यभाग पर्यन्त करके (ब्रह्मणाग्निः०) इत्यादि छः ऋचाओं से स्थालीपाक की छः आहुति एक उपस्तार दो अवदान और एक अभिघारण कर

यः सरीसृपम् । जातं यस्ते जिघांसति तमितो नाशयामसि ॥ यस्त्वा स्वप्नेन तमसा मोहयित्वा निपद्यते । प्रजां यस्ते जिघांसति तमितो नाशयामसि ॥ यस्त्वा भ्राता पतिर्भूत्वा जारोभूत्वानिपद्यते । प्रजां यस्ते जिघांसति तमितो नाशयामसि ॥ ये ते घ्नन्त्यप्सरसो गन्धर्वा गोष्ठाश्च ये । क्रव्यादं सुरदेविनं तमितो नाशयामसि ॥ यस्त ऊरू विहरत्यन्तरा दंपती शये । योनिं यो अन्तरारेढि तमितो नाशयामसि ॥ अभिन्नाण्डा वृद्धगर्भा अरिष्टा जीवसूवरी । विजायतां प्रजायतामियं भवतु तोकिनी ॥ विष्णुर्योनिं कल्पयतु त्वष्टा रूपाणि पिंशतु । आसिञ्चतु प्रजापतिर्धाता गर्भं दधातु ते ॥ गर्भं धेहि सिनीवालि गर्भं धेहि सरस्वति । गर्भं ते अश्विनौ देवावाधत्तां पुष्करस्रजा ॥ हिरण्ययी अरणीयं निर्मन्थतो अश्विना । तं ते गर्भं हवामहे दशमे मासि सूतवे ॥ परं मृत्यो अनुपरेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानात् । चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मा नः प्रजां रीरिषो मोत वीरान् ॥ इति द्वादश गर्भवेदिन्यः । षडाद्याः स्थालीपाकस्य । षडुत्तराआज्यस्य । २ । जयप्रभृति समानम् । ३ ।

नैजमेषं स्थालीपाकं श्रपयित्वा यथा षाडाहुतम् । नैजमेष परापत सुपुत्रः पुनरापत । अस्यै मे पुत्रकामायै पुनराधेहि

चतुरवत्त वा पञ्चावत्त की स्रुच् द्वारा करे और (यस्त ऊरू०) इत्यादि छः आहुति घी से करे ये बारह प्रधान आहुति गर्भ को प्राप्त कराने वाली हैं ॥ २ । ३ ॥ और जय होमादि सामन्य-कृत्य यहां भी पूर्ववत् करे ॥ ३ ॥

यदि पूर्वोक्त काम को एक वर्ष तक प्रत्येक प्रतिपदा के दिन करने पर भी

यः पुमान् ॥ यथेयं पृथिवी मह्युत्ताना गर्भमादधे। एवं तं गर्भमाधेहि दशमे मासि सूतवे ॥ विष्णोः श्रेष्ठेन रूपेणा- स्यां नार्यां गवीन्याम् । पुमांसं पुत्रमाधेहि दशमे मासि सूतवे ॥ ४ ॥ इत्यष्टादशः खण्डः समाप्तः ॥

पाकयज्ञान्समासाद्य एकाज्यानेकबर्हिषः ।
एकं स्विष्टकृतं कुर्यान्नाना सत्यपि दैवते ॥

नाना सत्यपि दैवतइति ॥ इति मैत्रायणीयमानवगृ- ह्यसूत्रे द्वितीयः पुरुषाख्यो भागः समाप्तः ॥ २ ॥ इति मानवगृह्यसूत्रं समाप्तम् ॥

पुत्र उत्पन्न न हो तो दूध वा जल में नैजमेष देवता के उद्देश से स्थाली पाक पकाकर सामान्य विधि के साथ प्रत्येक प्रतिपदा के दिन षाड़ाहुत कर्म के तुल्य (नैजमेषपरा०) इत्यादि तीन मन्त्रों से स्थालीपाक की तीन आहुति दिया करे ॥ ४ ॥ यह अठारहवां खण्ड पूरा हुआ–

जिन पाक यज्ञों में प्रधान देवता अनेक हों उनमें भी एक ही घी रक्खे एक पर्त्त कुश विछावे और सब की एक ही स्विष्टकृत् आहुति करे । किन्तु कई देवताओं के लिये इन कामों को पृथक् २ न करे। अन्तिमवाक्य को ग्रन्थ स- माप्ति दिखाने के लिये द्विर्वचन किया है। यह परिभाषा सूत्र सर्वत्र के लिये है ॥

इति श्री भीमसेनशर्मनिर्मितायांमानवगृह्यसूत्रस्यनागरीभाषावृत्तौ
द्वितीयःपुरुषःसमाप्तःसमाप्तश्चायंग्रन्थः ॥

अथसनातनधर्मपुस्तकालयस्यसूचीपत्रम् ॥

१-पाणिनीय अष्टाध्यायीसंस्कृतभाषा वृत्तिसोदाहरण २)
२-ब्राह्मणसर्वस्वमासिकपत्र १ भाग १॥)
ब्रा०स० मासिकपत्र २ भाग १॥)
गणरत्नमहोदधि (व्याकरण गणपाठ-श्लोकवद्व्याख्या सहित १)
दर्शपौर्णमासपद्धति भाषटीका ॥)
६ दृष्टिसंग्रह पद्धति भा०टी० ।)
७स्मार्त्तकर्म पद्धति भाषाटीका ।)
८ उपनयन पद्धति भाषाटीका ।)
९ गर्भाधानादि नवसंस्कार पद्धति भाषाटीका ≡)
१० त्रिकाल सन्ध्या भाषाटीका -)
११ कातीयतर्पण भाषाटीका -)
१२ शिवस्तोत्र भा० टी०)।
१३ हरिस्तोत्र भा० टी०)।
१४ भर्त्तृहरितीनों शतक भा०टीका ॥)
१५ मानवगृह्यसूत्र भा० टी० ॥)
१६ आपस्तम्ब गृह्यसूत्र ।)
१७ दयानन्दतिमिर भास्कर ३)
१८ सत्यार्थप्रकाश समीक्षा =)
(स० प्र० की १५० अशुद्धि)
१९ विधवा विवाह निराकरण द्वितीय भाग -)
२० मुक्ति प्रकाश भाषा (दयानन्दीय-मुक्ति खण्डन) -)
२१ दयानन्द लीला भाषा में)॥
२२ भजनबीसा)।
२३ दयानन्द हृदय)।
२४ सत्योपदेश भजन)।
२५ शुक्लयजुर्वेदी रुद्री ≡)
२६ पारस्कर गृह्य सूत्र हरिहर भाष्य सहित १॥)
२७ पञ्चतन्त्र भाषाटीका २)
२८ विनय पत्रिका तुलसीदासकृत ।=)
२९ सामुद्रिक भाषाटीका ।)
३० जातकालंकारज्योतिषभाषाटीका।=)
३१ कर्मविपाक भाषाटीका १)
३२ सारस्वत मूल ॥)
३३ दुर्गासप्तशतीपाकिटबुक(तावीज)≡)
३४ भगवद्गीता (तावीज) =)॥
३५ कहावत कल्पद्रुम ॥)
३६ मन्दालसाख्यान भाषा ।=)
३७ स्त्री सुबोधिनी १)
३८ भक्तमालनाभाजीकृत सटीक १)
३९ प्रभाती संग्रह =)
४० तुलसीदासकृत रामायण गुटका १)
४१ " " रफ् कागज ॥।)
४२ शिवमहिम्नस्तोत्र मूल छोटा -)
४३ चर्पटपञ्जरीस्तोत्र)॥
४४ शिव सहस्र नाम मूल =)
४५ विष्णुसहस्रनामगुटकामूल =)॥
४६ बृहत्स्तोत्ररत्नाकर गुटका ॥)
४७ दुर्गासप्तशती छोटा गुटका ।=)
४८ दुर्गासप्तशती भा०टी० ॥।)
४९ माधवनिदान (वैद्यक)भा०टी० १॥)
५० अमरकोश मूल छोटा ।)
५१ अमरकोश भाषाटीका १॥)
५२ अभिमन्युनाटक ॥।)

सूचीपत्र ॥

